PRINTED BOOK–POST
MANAVTA MANDIR, HOSHIARPUR
(REGD. 26265/ 74 PB.–HSP./ 7/ 2015–17)

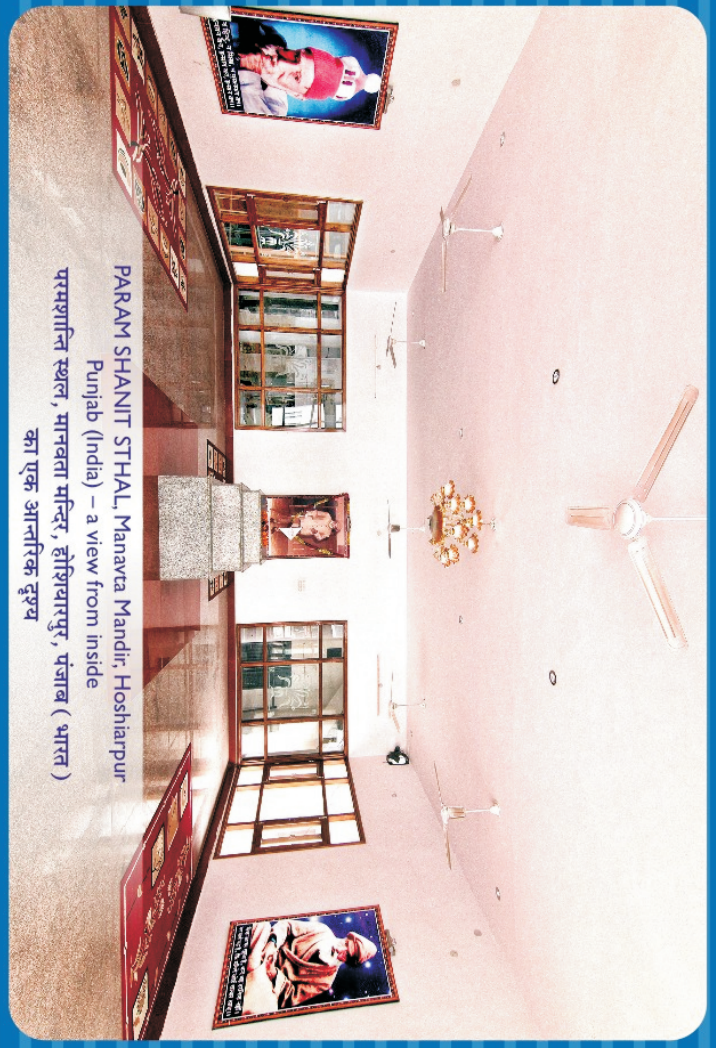

PARAM SHANIT STHAL, Manavta Mandir, Hoshiarpur
Punjab (India) – a view from inside
परमशान्ति स्थल, मानवता मन्दिर, होशियारपुर, पंजाब (भारत)
का एक आन्तरिक दृश्य

MANAVTA MANDIR
Manavta Mandir Road, Hoshiarpur–146001, Punjab
Contact : +91 1882–243154, 502154

मानव मन्दिर

परमसन्त परमदयाल पं. फ़कीर चन्द जी महाराज

जुलाई–अगस्त 2015 (वर्ष–42, अंक 7–8)

मानवता मन्दिर की संत-परम्परा

दाता दयाल महर्षि शिवब्रत जी महाराज की मूर्ति जो कि मानवता-मन्दिर के मुख्य सत्संग हाल में स्थापित है।

दयाल कमल जी महाराज, श्री ब्रह्म शंकर जिम्पा, ट्रस्ट प्रधान,राणा रणवीर सिंह ट्रस्ट सचिव, आचार्य निरंजन लाल शर्मा जी,आचार्य अग्रवाल जी व अन्य के साथ नया खरीदा गया जनरेटर मन्दिर को समर्पित करते हुए।

फ्री होम्योपैथिक डिस्पैंसरी में डॉ. मनमोहन सिंह रोगियों का परिक्षण करते व दवाई देते हुए।

मानव मन्दिर

जुलाई-अगस्त, 2015 (वर्ष–42, अंक 7–8)

विश्व में मानव-मात्र के सामाजिक, सांस्कृतिक, आध्यात्मिक कल्याण और विकास की सेवा में संलग्न पत्रिका

संस्थापक : परमसन्त परमदयाल पं. फ़कीरचन्द जी महाराज

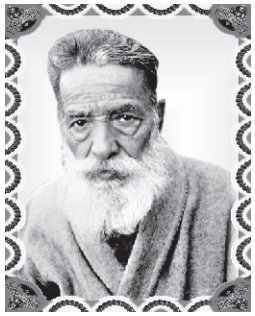

- प्रबन्धक सम्पादक :
  श्री ब्रह्मशंकर जिम्पा (प्रधान)
  (+91 94177-66913)
- प्रकाशक :
  श्री राणा रणबीर सिंह
  (जनरल सैक्रेटरी)
  +91 94631-15977, +91 97791-05905
  E–MAIL : ranbirrahal@outlook.com

अनुक्रमणिका

1.	शब्दों के सुमन	2
2.	एक तुच्छ विचार ने सबको नष्ट कर दिया–महर्षि शिवब्रत लाल जी महाराज	3
3.	महर्षि शिवब्रत लाल जी महाराज द्वारा रचित महारामायण	11
4.	प्रान की है मुख्यता – हजूर परमदयाल जी महाराज	21
5.	गुरु पूर्णिमा – हजूर परमदयाल जी महाराज	33
6.	गुरु पूर्णिमा – हजूर परमदयाल जी महाराज	40
7.	सत्संग – हजूर मानव दयाल जी महाराज	63
8.	सत्संग – दयाल कमल जी महाराज	74
9.	आभार प्रदर्शन	95

संपादक एवं ट्रस्ट अपनी पूर्व सन्त-परम्परा के विचारों के प्रति समर्पित है। शेष आचार्यों के विचार उनके व्यक्तिगत हैं, उनसे सहमति अनिवार्य नहीं।

FAQIR LIBRARY CHARITABLE TRUST (REGD.)

Manavta Mandir, Manavta Mandir Road,
Hoshiarpur–146001 (Pb.) Ph.: 01882–243154
e–mail : manavtamandirhsp@gmail.com
web : www.manavtamandirhsp.com
facebook.com/manavtamandirhsp

शब्दों के सुमन

हजूर दाता दयाल
महर्षि शिवव्रत लाल जी महाराज

कर पहले से कुछ जतन मीत,
इस जगत से न्यारा होना है॥

और युक्ति कोई काम न आवे,
इनमें जनम को खोना है॥

गुरू की भक्ति सदा हितकारी,
बीज भक्ति मन बोना है॥

सकल रसायन छोड़ दे भाई,
भक्ति सार का होना है॥

भक्ति का साबुन गुरू से पावे,
करम चदरिया धोना है॥

तज दे मोह नींद का आलस,
अन्त समय फिर सोना है॥

राधास्वामी चरन बाँध दृढ़ प्रीती,
नहीं फिर अन्त में रोना है॥

('शिव शब्द सागर' से संकलित)

सत्संग

एक तुच्छ विचार ने सबको नष्ट कर दिया

हजूर दाता दयाल
महर्षि शिवब्रत लाल जी महाराज

यम और नियम का पालन करना, हर काम के लिए आवश्यक है। यम और नियम का अर्थ है इन्द्रियों को वश में करके एक विशेष नियम पर चलना। यह मुक्ति का साधन है, जो एक प्रकार का बन्द है भी और नहीं भी है। बुरी भावनाओं को दिल में प्रवेश करने से रोकना बन्द है। बन्द इसलिए नहीं भी है कि यम और नियम द्वारा, मन या चित्त को एक ओर से हटाकर दूसरी ओर लगाया जाता है। मन की उपमा घोड़े से की गई है। यह मन घोड़ा है और शरीर रथ है। बुद्धि रथवान् है। यह चंचल घोड़ा रथ पर बैठे सवार तथा रथवान् को इन्द्रियों की राह में लिए हुए जा रहा है। राह में बड़े-2 गड्ढे हैं। यदि इसको रोका नहीं जाता तो चंचल और मुँहज़ोर घोड़ा गिर कर रथ को चूर-2 कर देगा। इसको रोकने के लिए इसकी लगाम को मोड़ कर और किसी ओर लगाना पड़ता है। रथवान् जिधर उसकी लगाम को

मोड़ता है घोड़ा उधर ही चलने लगता है। इसी प्रकार घोड़े की मनरूपी लगाम को फेरना है। तुम चाहो तो इस लगाम के फेरने को बन्धन कह सकते हो। परन्तु वास्तव में लगाम को फेरने की युक्ति को यम और नियम का नाम दिया जाता है।

मन का स्वभाव चंचल है। उसकी इस चंचलता को बदलने में समय लगता है। मन के स्वभाव को बदलने के लिए, मन को इन्द्रियों से मोड़कर दूसरी ओर लगा दो, तो सार की बात समझ में आ जायेगी। जब आपके मन का स्वभाव बदलने लगा, तो उसमें अपार शक्ति आती चली जायेगी और वह महाबलवान् हो जायेगा। इस बात को एक उदाहरण से समझाया जा सकता है। यों समझो कि पानी से भरा एक कुण्ड है। उस कुण्ड में से एक नहर कटी हुई है। नहर में कई छिद्र कर दिये गये हैं जिनमें से इस नहर का पानी रिस-रिस कर धीरे-धीरे खेतों में चला जा रहा है। इन सब छिद्रों को बन्द कर दो। इस नहर को बहिर्मुखी राह को बन्द कर दो। क्या होगा? तब नहर का पानी कुण्ड में ही आकर उसके पानी से मिल जायेगा। छिद्रों को बन्द कर देना, नहर की बाहर जाने वाली राहों को रोक देना ही यम और नियम कहलाता है। देखो इससे कितना लाभ होता है। इस रोकथाम के नाम से घबराना नहीं चाहिए। सृष्टि में यह परम आवश्यक नियम है। जीवन के किसी भी विभाग में यम नियम के बगैर काम नहीं चलता। पग-पग पर रोकथाम की आवश्यकता रहती है।

आप लड़के को पाठशाला क्यों भेजते हो? इसलिए ही न कि उसकी शिक्षा रोकथाम के साथ हो जाये। शिक्षा क्या है? यह मन पर बन्द है, जिस पर व्यक्ति की चित्त की वृत्ति किसी और तरफ न जाये और वह दृढ़ता और रुकावट के साथ एक जगह टिक जाये। उठने-बैठने का ढंग सीखे। चित्त के एकाग्र करने में, उसकी वृत्तियों को रोके। प्यारे मित्रो! इन सब बातों पर विचार करो। जो काम यह एक स्कूल जाने वाला लड़का करता है, वही ही तो योगी करता है और वही ही तो महर्षि पतञ लि भगवान् सिखाते हैं। स्कूल में जाना यम

नियम है। एक जगह बैठना आसन है। चित्त की वृत्तियों को रोकने का यत्न प्रत्याहार है। चित्त की वृत्तियों का थोड़ा रुकना धारणा, उसे अधिक रुकना ध्यान और बहुत अधिक रुकना समाधि है। स्वभाव बदल दो, समाधि, विद्या और ज्ञान स्वयं प्राप्त हो जायेंगे। यदि आपका स्वभाव नहीं बदला तो मन चंचल है, फिर भले ही लाख यत्न करो, आप निबल के निबल ही रहोगे और इस निबलता के कारण जाने या अनजाने में अपने को तथा दूसरों को हानि पहुँचाते रहोगे।

यम और नियम का होना प्रकृति में अति आवश्यक है। योगियों के योग-साधन का भी यही मत है। जब सांसारिक तथा शारीरिक व्यवहार के प्रत्येक छोटे या बड़े काम में यम और नियम की ही आवश्यकता होती है तो क्या आत्मिक या आध्यात्मिक व्यवहार में उसकी आवश्यकता न होगी? होगी और अवश्य होगी। यम नियम की कमी, अर्थात् रोकथाम के बन्धन के न होने से मनुष्य अपनी और दूसरों की भी हानि करता रहता है। यदि वह यम नियम के अनुसार बन्द लगा दे तो उसे सार वस्तु का साक्षात्कार हो जाये–

आँख कान मुख बन्द कर, कर अनहद अभ्यास।
गुरु की दया अपार से, कटे काल का फाँस॥

मन को रोको, उसे वश में लाओ और उसे चंचल न होने दो। जिसका मन वश में नहीं है, उसका दान लेने वालों का मन भी चंचल होगा। जिसका मन वश में नहीं है, उसके बनाये हुये स्कूलों और कालेजों से चंचल विद्यार्थी निकलेंगे, जो अन्त में हानि ही पहुँचायेंगे। पूर्वजों को बदनाम करेंगे और संसार में हिंसा फैलायेंगे। जिनका मन वश में नहीं है, उनके बनाये हुए अनाथालय से वे अनाथ निकलेंगे जो साक्षात् निर्बलता के रूप होंगे। वह धर्म, कर्म, कथा, वार्ता, पूजा, पाठ, सन्ध्या, दान इत्यादि सब बेकार हैं, जो बिना मन के रोके हुए किये जाते हैं।

इस मन के तीन रूप हैं–

1. चंचल
2. मूढ
3. अज्ञानी।

बन्दर चंचल होता है, रीछ मूढ़ अर्थात् आलसी तथा राक्षस अज्ञानी अर्थात् आत्मविद्या से विहीन होता है। बन्दर हनुमान तथा सुग्रीम की सेना है। रीछ जामवन्त और उसके साथी हैं तथा राक्षस विभीषण तथा उसका जत्था है। ये तीनों ही हानिकारक तथा बुराई फैलाने वाले हैं। राम ने इन तीनों को अपने साथ लिया और शस्त्रविद्या की शिक्षा दी। इन्हें सिखाया पढ़ाया। परिणाम क्या हुआ? चंचल निश्चल हो गया, मूढ़ साहसी और पराक्रमी बन गया, अज्ञानी ज्ञानी हो गया। इन तीनों ने मिलकर रावण जैसे परम शक्तिशाली राजा को पराजित कर दिया। अत: मन को वश में रखना हज़ारों शास्त्रार्थों में विजय पाने से कहीं बढ़कर है।

मन पर अधिकार पाना धर्म के पहाड़ की चोटी पर पाँव जमाना है। मन को निर्मल रखना रसातल के तले दब कर बेबस होना है। हिन्दुओं में जहाँ कहीं भी धार्मिक शिक्षा दी जाती है, सबसे पहिले मन को वश में करने का उपदेश दिया जाता है। रावण ने मन को बेलगाम छोड़ दिया था, उसके लाखों सम्बन्धी मारे गये और वह स्वयं भी मारा गया। राम ने अकेले बन्दर, रीछ तथा राक्षस को वश में किया और संसार में अपना काम कर गये।

श्रीकृष्ण महायोगीथे। इसलिए कहा जाता है कि जहाँ श्रीकृष्ण होते हैं, वहाँ विजय होती है, क्योंकि श्रीकृष्ण आँख वाले थे। जहाँ धृतराष्ट्र होगा, वहीं हार होगी क्योंकि उसकी आँख नहीं थी, वह अन्धा था। आँख वाला बनना और सर्वदर्शी होना, दृष्टि को नीचे से ऊपर की ओर ले जाना मन की गढ़न्त और शिक्षा है। मन को वश में लाना सच्चा तीर्थ और सच्चा धार्मिक जीवन है। यदि मन काबू में नहीं है, तो भले ही लाख तीर्थ किये जायें सब के सब व्यर्थ हैं–

तीर्थ चाले दो जना, चित चंचल मन चोर।
एको पाप न उतरा, लाये दस मन और॥
नहाये धोये क्या भया, जो मन में मैल समाये।
मीन सदा जल में रहे, धोये बास न जाये॥

मन को रोको, मन को ही उपदेश दो। मन में बुरे भाव मत लाओ और न ही किसी को हँसी-मज़ाक में भी बुरे तथा हानिकारक विचार की सूझ सूझाओ, नहीं तो तुम व्यर्थ ही अपनी, औरों की तथा संसार की हानि करोगे।

एक बार एक मनुष्य ने एक छोटे बच्चे को हँसी-मज़ाक में एक बुरे तथा हानिकारक विचार की सूझ सुझाई उसका परिणाम जो हुआ वह नीचे बताया जा रहा है।

यह घटना बादशाह शाहजहाँ के समय की है। आगरे की एक मस्जिद में एक मौलवी साहिब लड़कों को पढ़ाया करते थे। वह बहुत ही नेक तथा सीधे-सादे थे। लड़के प्राय: महादुष्ट होते हैं। वह पढ़ने-लिखने में जी चुराते हैं। उन्होंने एक दिन किसी व्यक्ति से कहा, ''क्या आप कोई ऐसी तरकीब बता सकते हैं जिससे मौलवी साहिब पढ़ाना छोड़ दें।''

उस व्यक्ति ने मज़ाक में कह दिया, ''कल तुम लोग मौलवी साहिब के मन में यह बात बिठा दो कि वह वास्तव में बादशाह शाहजहाँ है। बस, फिर वह पढ़ाने की बात भूल जायेंगे।''

लड़कों को यह बात पसन्द आई। दूसरे दिन लड़के पढ़ने के लिए देर से आये। मौलवी साहिब समय पर आ गये थे। उनको क्रोध आ रहा था कि लड़के समय पर क्यों नहीं आये थे? इतने में एक लड़का आया। उसने तीन बार झुक-झुक दरबार के नियम के अनुसार सलाम मुजरा किया और चुपके से हाथ बाँध कर एक ओर खड़ा हो गया। मौलवी ने पूछा, ''देर क्यों हुई?'' लड़का बोला, ''जहाँपनाह! देर कहाँ हुई है? अभी तक तो मौलवी साहिब ही नहीं आये हैं।''

अभी मौलवी साहिब तथा उस लड़के में बातचीत हो ही रही थी कि दूसरा लड़का आया। उससे भी मौलवी साहिब ने देरी से आने का कारण पूछा तो उस लड़के ने भी उसी तरह झुक कर मौलवी साहिब को सलाम किया और उन्हें बादशाह कहकर सम्बोधित किया। मौलवी हैरान था। इतनी ही देर में तीसरा लड़का उनके निकट आया

मौलवी साहिब ने जब उससे देरी से आने की वजह पूछी, तो उसने भी पहिले दो लड़कों की भाँति उसे बादशाह कह कर सम्बोधित किया और वैसा ही उत्तर दिया। फिर चौथा तथा पाँचवा लड़का आया तो उन्होंने भी वैसा ही किया।

पहिले तो मौलवी साहिब ने यह समझा कि वह लड़के बावले हो गये थे। परन्तु जब एक नहीं पाँच-पाँच लड़कों ने उन्हें बादशाह बतलाया तो वह कुछ भ्रम में पड़ गये और धीरे-धीरे उन्हें विश्वास हो गया कि वह बादशाह शाहजहाँ ही थे। यह भ्रम होते ही, उनके मन के समुद्र में तरंग उठने लगी और उन्होंने अपने-आपको सचमुच ही बादशाह समझ लिया। उन्होंने एक दर्पण मंगवाया। उसमें अपना मुँह देखा, चेहरा बादशाह जैसा दिखने लगा क्योंकि मन को एक साथ पाँच लड़कों ने बादशाह होने का विचार दिया था। उनके मन को जो विचार गया था वह विश्वास में बदल गया। बस फिर क्या था। उनके मन में मौलवीपने की दशा एक दम से हट गई और वह बादशाह बन बैठे। अब लड़कों को कैसा पढ़ाना कैसा लिखाना। वह पागल हो गये, बावले हो गये। पागल कैसे पढ़ाये। उन्होंने पढ़ाना छोड़ दिया। लड़कों को पढ़ने से दो-चार दिन की छुट्टी हो गई। परन्तु मौलवी साहिब के बच्चे भूखे मरने लगे और मौलवी साहिब तो यह रटने लगे कि वह बादशाह है।

पहिले तो लोग इन पर हँसने लगे परन्तु जब धीरे-धीरे यह बात राजदरबार तक पहुँची तो उनको पकड़वा कर बादशाह की आज्ञा से जेल में डाल दिया गया। यह है मन को काबू में न रखने का तमाशा। हाँ इस मौलवी साहिब को कैद में डालने वाली बात को बादशाह के एक लड़के औरंगज़ेब ने मन में रखा। यह बात सदा उसके ध्यान में रही और समय आने पर उसने अपने पिता को वैसे ही कैद में डाल दिया जैसा कि बादशाह बने हुए भिखारी को शाहजहाँ ने कैद किया था और शाहजहाँ के जीते-जी स्वयं बादशाह बन बैठा। बचपन के

एक तुच्छ विचार ने औरंगजेब को भारत का सम्राट् बना दिया और मौलवी साहिब के भ्रम ने वह सचमुच बादशाह था बिल्कुल बरबाद कर दिया। एक तुच्छ भ्रम के विचार ने उन्हें बरबाद कर दिया।

अत: मेरे प्यारो! अपने बच्चों तक को कभी मज़ाक में भी यह मत कहो, ''तुम मूर्ख हो, नासमझ हो।'' नहीं तो वह तुम्हारे भाव का सहारा पाकर और तुम्हारा संस्कार लेकर वैसे ही बनते जायेंगे। तुम अपने पड़ोसी को भी बुरा मत कहो और न ही किसी मिलने-जुलने वाले को बुरा कहो, नहीं तो जीवन नष्ट हो जायेंगे। उनका साहस और उत्साह जाता रहेगा और तुम पापी बनोगे। तुम्हारा एक छोटा सा बुरा विचार लोगों को तबाह कर सकता है। मन को, वचन को, कर्म को रोको। इस रुकावट ने तुम किसी समय अपने तथा दूसरों के लिए लाभदायक होंगे। कबीर साहिब कहते हैं–

मन

मन ही को परबोधिये, मन ही को उपदेश।
जो यह मन वश आवई, तो शिष्य होय सब देश॥
मन मुरीद संसार है, गुरु मुरीद कोई साध।
जो माने गुरु वचन को, ता का मता अगाध॥
बात बनाई जग ठग्यो, मन परबोध्यो नाहिं।
कबीर वह मन ले गया, लख चौरासी माहि॥

बचन

गार अंगारा क्रोध झल, निंदा धुआँ होय।
इन तीनों को परिहरै, साध कहावै सोय॥
आवत गारी एक है, उलटत होय अनेक।
कहै कबीर न उलटिये, वही एक का एक॥
गाली सों सब उपजे, कलह कष्ट और मीच।
हार चले सो सन्त है, लाग मरे सो नीच॥

कर्म

करनी-करनी सब कहैं, करनी माहिं विवेक।
वह करनी वह जान दे, जो नहिं परखे एक॥
करनी सोई कीजिए, जासों आपा जाय।
बैर भाव उपजै नहीं, मन में प्रेम बढ़ाय॥
करनी कर्म विवेक बिन, उपजावे संसार।
कहैं कबीर इस योग से, उतरै नहिं भव पार॥

भावार्थ

मन, वचन, कर्म के रोकथाम और बन्द लगाने का सबसे उत्तम तथा सुगम साधन है सुरत-शब्द योग का अभ्यास।

तीन बन्द लगाय कर, सुन अनहद टंकोर।
नानक सुन्न समाध में, नहीं साँझ नहीं भोर॥
जैसे जल में कँवल निरालय, मुरगाबी नशानिये।
सुरत-शब्द भवसागर तरिये, नानक नाम बखानिये॥

सूचना

सभी दानी सज नों, सत्संगियों से अनुरोध है कि जो धनराशि मानवता मन्दिर, होशियारपुर में भेजना चाहते हैं, उनकी सुविधा के लिए हम Punjab Natonal Bank, Hoshiarpur के दो Account Numbers दे रहे हैं। इच्छुक सत्संगी Faqir Library Charitable Trust A/c No.– 02060001000-57805, IFSC Code–PUNB0020600 और Manavta Mandir Hoshiarpur A/c No. 0206000100209756, IFSC Code–PUNB0020600 में जमा करवा सकते हैं। कृपया जो भी राशि जमा करवायें उसकी रसीद की एक कॉपी अपने पत्र के साथ मंदिर कार्यालय में भेज दें अथवास ूचितक रद ें,त ाकिद ानियोंक ीस ूचीम ेंउ नकान ाम प्रकाशित किया जा सके तथा रसीद भी भेजी जा सके।

सचिव

फ़कीर लाईब्रेरी चैरिटेबल ट्रस्ट, होशियारपुर।

महर्षि शिवब्रत लाल जी महाराज

द्वारा रचित

महारामायण

(गतांक से आगे)

तीसरा समुल्लास

द्वादश चक्र निरूपण

''मित्रो! शिव में कल्याण है और इस हमारे स्थूल शरीर में शान्ति और निभ्रान्ति का शिव ग्रन्थी ही स्थान है। यह इसकी चोटी है। यह शिव ग्रन्थी क्या है? इसकी समझ खट चक्र निरूपण से कुछ-कुछ आयेगी। इसलिए मैं बहुत संक्षेप के साथ तुमको समझाने का प्रयत्न करता हूँ।

मनुष्यों और दूसरे जीव जन्तुओं के भी तीन शरीर हैं- स्थूल, सूक्ष्म और कारण।

स्थूल वह देह है जिसे तुम देखते हो और जिसमें दस बहिर्मुखी इन्द्रियाँ हैं- पाँच कर्म की और पाँच ज्ञान की।

सूक्ष्म शरीर तुम्हारा मन है जिसमें चार-अन्त:करण चित्त, मन, बुद्धि और अहंकार अन्तर्मुखी इन्द्रियाँ हैं।

कारण शरीर तुम्हारे दोनों देहों का बीज रूप लय स्थल है और यह दोनों देह समय-समय पर उससे उत्पन्न होते ओर उसी में लय होते हैं।

इस स्थूल देह में खट चक्र हैं। उनके नाम और स्थान यह हैं-

चक्रों के नाम स्थान तत्व ग्रन्थी

		स्थान	तत्व	ग्रन्थी
1.	मूलधार	गुदा	मिट्टी	ब्रह्मा ग्रन्थी
2.	स्वाधिष्टानम्	इन्द्री	पानी	
3.	मनीपूरम	नाभि	आग	विष्णु ग्रन्थी
4.	अनाहत	हृदय	वायु	
5.	विशुद्धी	कण्ठ	आकाश	शिव ग्रन्थी
6.	आजना	भ्रूमध्य तीसरा तिल	आत्मा	

यह स्थूल देह के खट चक्र हैं। स्थूल देह में इनके स्थान तुम जान गये। इस चित्र में इसका निरूपण देखो- जैसे पिंड (स्थूल देह) में यह तीन ग्रन्थी हैं वैसे ही सूक्ष्म और कारण देह में भी तीन ही तीन ग्रन्थी हैं। यह नौ हैं। हर ग्रन्थी में दो-दो चक्र हैं। षट चक्र स्थूल देह, सूक्ष्म देह और कारण देह में हैं। इस दृष्टि से वह 18 हो जाते हैं। विचार ग्रन्थियों ही का किया जाता है।

इस स्थूल देह में शिव ग्रन्थी चोटी पर है जो विशुद्धी से चलकर आजना चक्र (भ्रू मध्य) तक है। इसी आजना चक्र से सुषुम्ना नाड़ी की चाल का मस्तिष्क में पता लगता है और सुषुम्ना मार्ग का रास्ता यहाँ से निकलता है।

तीन चक्र मस्तिष्क में है- (1) सहस्रार, (2) त्रिकुटी या त्रिकूट और (3) शून्य यह सूक्ष्म देह में है।

(6) अजाना चक्र

(5) विशुद्धी चक्र

(4) अनाहत चक्र

(3) मनीपूर चक्र

(2) स्वाधिष्टान चक्र

(1) मूलाधार चक्र

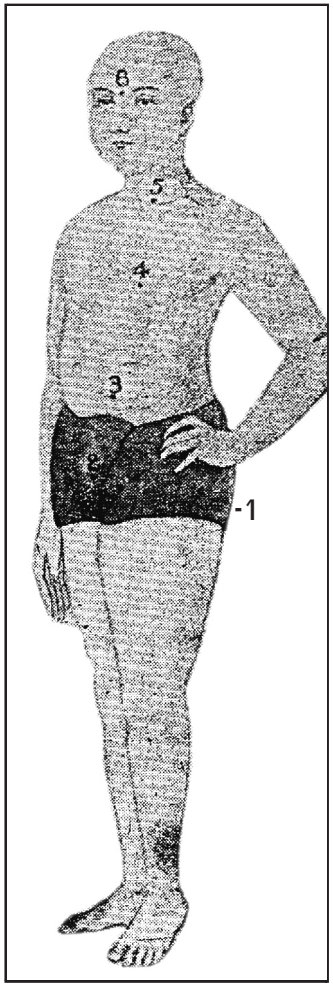

(6)

(5)

(4)

(3)

(2)

(1)

और इसी प्रकार तीन शेष चक्र (1) महा शून्य (2) भँवर गुफा और (3) सत्य लोक मस्तिष्क के मध्य से चलकर खोपड़ी के मध्य भाग में स्थान पाते हैं। यह कारण देह के चक्र हैं।

यह द्वादश चक्रों का विधान है।

राम ने इतना समझा कर अपनी सेना को बताया कि किस अभिप्राय से सेतबन्ध रामेश्वर समुद्र के तट पर शिव स्मर्णार्थ स्थापना की गई है।

वह योग का विषय था। किसी की समझ में आया किसी की समझ में न आया। लेकिन प्रसन्न और सुखी सब हुए और उत्सव के पश्चात् जो अतिथि जन यज्ञ में आये हुए थे, राम को नमस्कार करके अपने अपने निवास स्थान को चले गये।

चौथा समुल्लास

सेतुबंध के पार लंका में प्रवेश

मंदिर के समस्त उत्सव के पश्चात् राम की सेना पुल पर आई। ''रामचन्द्र की जय-जय की ध्वनि पुल, समुद्र और आकाश तल में गूँज उठी। पुल लम्बा चौड़ा, लम्बा तो कम से कम 27 या अधिक मीलों का रहा होगा। चौड़ा इतना था कि एक दर्जन मनुष्य सुगमता के साथ-साथ चल सकते थे। राम की सेना चतुरंग नहीं थी। सब की सब पैदल थी। घोड़े-हाथी ऊँट कहाँ इकट्ठा किये जा सकते थे। यह बन्दर अपने डील-डौल की दृष्टि से पुल पर चलते समय सिंह और हाथी प्रतीत होते थे। आगे रीछ, बीच में बन्दर और इनके पीछे राक्षस थे। राम-लक्ष्मण सवारी पर थे और सवारी भी कैसी विचित्र! किसी ने कभी देखा न सुना। वह हनुमान का कंधा था। एक तरफ राम बैठे थे, दूसरी तरफ लक्ष्मण। दोनों के हाथों में धनुष-बाण थे। और यह सब के बीचों-बीच में थे।

समुद्र के जीवों ने इनको देखने के लिए पानी के अन्दर से अपना सिर ऊँचा किया। इन में से किसी-किसी का डील-डौल इतना लम्बा चौड़ा था कि वह पानी पर तैरते हुए लम्बे चौड़े जहाज प्रतीत होते थे। इन सब ने राम और राम की सेना को देखा और राम और राम की सेना ने उनको देखा दोनों आश्चर्य निमग्न हो गये। अब तक ऐसा परस्पर दृश्य आँखों के सामने न आया होगा। राम की अपार दृष्टि इन पर पड़ी। उन का क्या परिणाम होगा। उसे केवल साधु और भक्त ही समझ सकते हैं। यह ऐसी बात है जो सर्व साधारण की समझ से बाहर है।

दृष्टि में सृष्टी है सृष्टी दृष्टि का परमान है।
साथ में दृष्टि के मन है मन में राम अनुमान है॥
दृष्टि की बिजली चमक उठती है दृष्टि में जो आन।
फिर यह बिजली अनुभव और सतज्ञान गम की खान है॥
राम के दर्शन में है गुन लाभदायक गुन है यह।
गुन सगुन निर्गुन का यह दर्शन महा स्थान है॥
चित्त की वृति पाके दर्शन कुछ की कुछ बन जाती है।
और इसी वृति के द्वारा प्राणी का कल्याण है॥
जब पड़ी आदित्य की दृष्टि किसी परवत पर आ।
नीलम और पुखराज हीरों की तब खान है॥

हँसते, खेलते, उछलते-कूदते हुये सेना चली। पुल के नीचे समुद्र अपनी लहरों की आँखों को उठा-उठा कर राम के रूप का दर्शन करता था। पुल इतना ऊँचा था कि लहरें सेना को भगा नहीं सकती थी। उन्हें राम का चरणोदक इस समय प्राप्त नहीं हुआ। वह तरसती ही रह गई। हाँ! वह नीचे नीचे लहराता रहा और पुल के ऊपर राम की सेना दूसरा समुद्र बन कर लहराती हुई जा रही थी। नीचे समुद्र ऊपर समुद्र! नीचे निर्गुण ऊपर सगुण। इस दृश्य ने विचित्र रूप से निर्गुण और सगुण का चित्र खींच कर दिखा दिया।

है सगुण में गुण तो निर्गुण बन रहा है निर्गुणी।
ध्यान करते हैं सगुण का सब ऋषि ध्यानी मुनि॥
क्या है निर्गुण में धरा, गुण की सगुण में खान है।
है सगुण में भक्ती सेवा, ज्ञान और अनुमान है॥
ज्ञान निर्गुण में कहाँ, मन वाणी गा सकते नहीं।
बात क्या करते हो उसकी, सम्भवत यह है कही॥
ब्रह्म की किसको समझ है, सोचो अपने मन में तुम।
राम की भक्ति करो,मन बुद्धि चित्त और तन में तुम॥

पहले संगत गुरू की हो, पीछे सत का ज्ञान हो।
ज्ञान और भक्ति मिले, तब जीव का कल्याण हो॥

बीच में ठहरने का कहीं ठिकाना नहीं था। नल नील ने ऐसा सम्बन्ध नहीं किया था। वह चले और सुग्रीव ने उन्हें ललकारा।

हाँ शूरवीरो! पग को बढ़ाये चले चलो।
झिझको न ठिठको पग को बढ़ाये चले चलो॥
हैं राम साथ में, नहीं! भय है न चिन्ता है।
मन राम के चरणों में लगाये चले चलो॥
जीतोगे अपने शत्रु को संदेह कुछ नहीं।
लंका की ओर दृष्टि जमाये चले चलो॥
क्या रूप है अनूप, दर्श पाके तर गये।
यह रूह अपने चित में बसाये चले चलो॥
थोड़ी ही देर पीछे पहुँच जाओगे अभी।
साहस से काम लेते लिवाते चले चलो॥

बंदरों का स्वभाव चंचल होता है। गरजे, तड़पे, उछले, कूदे और पुल पर से दोनों तरफ समुद्र की लहरों का तमाशा देखते हुए चल निकले। घंटों ही में पुल के पार पहुँच गये। लंका की भूमि में प्रवेश किया।

जामवन्त और अंगद सुभीते की जगह खोजने लगे। एक रमणीक हरा भरा मैदान देखा। पृथ्वी चौरस थी। पास ही नदी बह रही थी। लंबे-चौड़े और ऊँचे घने वृक्ष भी बहुतायत से थे। राम और लक्ष्मण के लिए दो साफ-सुथरे झोंपड़े बनाये। बन्दरों ने वृक्षों की डालियों का बसेरा स्वीकार किया। रीछ खोखलों में ठहरे और राक्षसों ने घास-फूस की कुटिया बना ली। सब उसी जगह ठहरे।

राम ने आज्ञा दी, ''अभय होकर वन के फल खाओ।''

यह वन में घुसे। राक्षसों का देश! उन्हीं का सब जगह चौकी पहरा। बन्दर पिल पड़े। जो मिला उसकी दुर्गति की। नोंचा खसोटा, मारा पीटा। जो उनके पास मिला, लूटा छीना। इनमें भगदड़ पड़ गई। सब सुन चुके थे कि एक बन्दर ने लंका को जलाकर मिट्टी में तिला दिया। पहिले ही से डरे-सहमे थे। जब उनकी भीड़ देखी, फिर सामना कौन करता। अपनी जान बचा-बचा कर भाग निकले और स्थान राक्षसों से खाली हो गया।

खाया, पीया। थके मांदे थे, जगह-जगह आग जलाई। चौकी पहिरे का काम संतरियों को सौंप कर सो गए। थोड़े से बन्दर आदि उस टीले पर राम-लक्ष्मण के साथ ठहरे, जहाँ इनका झौंपड़ा था।

पाँचवाँ समुल्लास

गपशप

कुटी के बाहर घास-फूँस बिछाकर राम लेट गये और हनुमान पाँव दबाने लगे। शरद ऋतु का चन्द्रमा खिला हुआ था। दृष्टि आकाश पर थी।

राम ने पूछा- ''यह जो चाँद के बीच में सांवला रंग दिखाई दे रहा है, क्या है?''

अंगद ने कहा- ''यह पहाड़ों की झाँई और परछाई है। चन्द्रलोक में भी बस्ती है।''

सुग्रीव- ''नहीं-नहीं यह आपकी सांवली मूर्ति का प्रतिबिम्ब है।''

लक्ष्मण-''आप अपने साँवले रंग से इस में व्यापक हो रहे हैं।''

हनुमान-''यह चाँद आपका भक्त है। आपके ध्यान में रहता है। यह साँवली मूर्ति के ध्यान का प्रभाव है जो दिखाई दे रहा है।''

राममुस्कराये।जैसाजिसकाविचार,उसकावैसाव्यवहार। भक्तों को अपने भगवंत के अतिरिक्त कुछ दिखाई नहीं देता। यह सब

में अपने इष्ट को व्यापक समझते हैं। यह क्यों नहीं कहते कि चाँद सीता के रूप को देखकर लज्जित हो रहा है। काले धब्बे हैं जो लज्जा के प्रभाव से इस में दिखाई दे रहे हैं।

राम ने कहा-''वह देखो, सामने एक ऊँचा टीला है, जो जगमगा रहा है और वहाँ से बादल की गर्ज की सी ध्वनि सुनाई दे रही है और इसके मध्य में से कोई बड़ी सी वस्तु चमक रही है। साथ ही एक बड़ा प्रकाशवान पदार्थ जगमगा रहा है। जिसको उपमा नहीं दी जा सकती।'' और तो किसी ने उत्तर नहीं दिया। विभीषण बोले-''यह ऊँचा जिसे आप देख रहे हैं त्रिकूट पर्वत है और जिस जगह जगमग-जगमग प्रकाश हो रहा है उस पहाड़ की चोटी है। इस पहाड़ पर रावण ने बारह दरी बनवा रखी है जिसमें बारह दर हैं। ये सबके सब चारों ओर से खुले हैं। यह बहुत लम्बी-चौड़ी है और राक्षसों की बहुत बड़ी संख्या उसमें बैठ सकती है। कभी-कभी वहाँ दरबार भी लगा करता है। पूरब के दर से लगा हुआ सिंहासन बिछा है और इस सिंहासन पर हीरों से जुड़ा हुआ छत्र खड़ा है। जो वस्तु बहुत चमक-दमक दिखा रही है वह रावण का मणि जटित मुकुट है। इसमें बहुमूल्य चमकदार रत्न लगे हैं। जो छोटे-छोटे आकार की ज्योति रह-रह कर दमकती है वह मंदोदरी रानी का जुगनू (गहना) है। इस समय रावण सभा में बैठा हुआ नाच-रंग देख रहा है। गाना बजाना हो रहा है। बादलों के गर्जने की ध्वनि 'ओ३म्-ओ३म्' करते हुये जो आप सुन रहे हैं वह पखावज के थाप की गूँज है।''

राम यह सुनकर मुस्कराये। धनुष से बाण को जोड़ा और उसे छोड़ दिया। बाण रावण के मुकुट पर लगा। मुकट टुकड़े-टुकड़े होकर सिंहासन के पीछे गिरा। जो जगमाहट दृष्टि में आ रही थी वह देखते-देखते गुप्त हो गई और बाण लौट कर फिर राम के तर्कश में आ

समाया। यहाँ बन्दर, राक्षस और रीछ देखकर चकित हो गये और रावण की सभा में अशान्ति फैल गई।

रावण ने उसी समय सुना था कि लंका में राम ने प्रवेश किया। वह मन बहलाने के निमित्त नाच रंग कर रहा था। सनसनाते भिन-भिनाते हुये राम बाण को सब ने रावण के मुकट पर लगने, मुकट के तोड़ने और उसके गिराने को देखा। वह अपने तेज में चमक रहा था। उसे टूटते हुये भी सबने देखा लेकिन यह किसी को भी न सूझी कि उसे पकड़ ले। राक्षस कहने लगे-''यह बड़ा असुगन हुआ। अभी राम आए और अभी रावण का मुकट अकसमात् टूट कर नीचे गिर पड़ा। यह बाण किसका था? किसने चलाया? यह अवश्य काल का बाण था।''

वहाँ कई प्रकार की गपशप होने लगी। यहाँ भी राम की सेना ने विचित्र बाणविद्या का चमत्कार देख कर आश्चर्य माना। अंगद अभी लड़का था। इससे न रहा गया। पूछा-''प्रभो! यह कैसा बाण है?''

राम ने कहा-''इसे मन बाण कहते हैं। बाण विद्या नाना प्रकार की है। परशुराम, विश्वामित्र और अगस्त आदि ऋषि इसमें महा प्रवीण समझे जाते हैं। मनसर, चितसर, ब्रह्मसर, वरुणसर, शक्तिसर, इन्द्रसर इत्यादि कई प्रकार के बाण चलते हैं। जो इनकी विधि को जानता है वही चला सकता है।''

अंगद ने कहा- 'इसकी विशेषता क्या है?'

राम बोले- ''इसमें दुधारे का बल होता है। यह दो विधि होता है। संकल्प-विकल्प दोनों इसमें रहते हैं। आकर्षण शक्ति, मानसिक बल लिये हुये बढ़ी रहती है। लड़के चर्खी का खेल खेलते हैं। वह ऊपर भी जाती है नीचे भी आती है, यह बात उस लड़के की रुचि पर है। उसी नियम के अनुकूल यह मन चलता है और अपना काम करके लौट आता है। यह सब बाणों में छोटा बाण कहलाता है। ब्रह्मसर आदि इससे अधिक तेजोमय और बलवान होते हैं।''

फिर किसी ने बात चीत नहीं की। राम ने आप ही अपने श्रीमुख से इसको समझाया। ''सिद्धि, शक्ति, निधि, क्रियकारिता सब की सब मानसिक बल के आधीन है। यह सब के सब मन के खेल हें। पहिले मन की विधिपूर्वक रोकथाम करनी चाहिये। जिससे एकाग्रता का बल आ जाये। इस बल के प्राप्त करने में साधन और अभ्यास करना पड़ता है। ज्यों-ज्यों यह अधिक बढ़ती जाती है। त्यों-त्यों इसकी वृत्तियों में आकर्षण शक्ति अधिक से अधिक होती जाती है और यह जो चाहे कर सकती है और कर लेती है।''

अंगद-''क्याए कम नुष्यइ सश ाक्तिस`ब हुतोंप रि वजयप ा सकता है?''

राम-''इस प्रश्न का उत्तर में क्या दूँ ? बड़ी विजय के लिए बड़ा बल और मनुष्य जाति के एकाग्र वृति बल की आवश्यकता है। एक चने से भाड़ नहीं फट सकता। भाड़ का घड़ा मुख तक चनों से भरा हुआ हो और उसे आग दी जाये तो चनों की एक साथ भड़कने और फूटने से भाड़ का एक बार फटना सम्भव हो सकता है।''

अंगद-''आप एक हैं आप में बड़ा बल है।''

राम- ''मैं अकेला नहीं हूँ। सारा विश्व मेरे साथ है। यह पृथ्वी के प्राणी मात्र की चित्तवृत्ति एकाग्र होकर एकत्रित हुई और हाहाकार मचाती हुई विष्णु शक्ति को ऊँचे चढ़ कर हर लिया, तो उस की आकर्षण शक्ति के बल से विष्णु शक्ति का अवतार हुआ और वही अवतार कहलाया है। इसमें विष्णु मनोवृति के आकर्षण शक्ति का बल होता है।''

यों गपशप करते हुए राम को नींद आ गई। सब सोने चले गये। हनुमान और लक्ष्मण पहरा देने लगे।

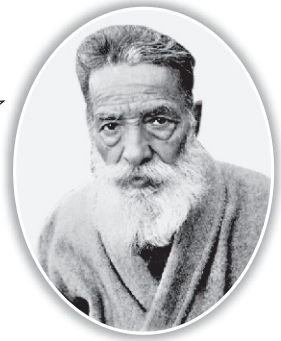

सत्संग
परमसन्त हजूर परमदयाल
पं. फकीर चन्द जी महाराज

प्रान की है मुख्यता

मानवता मंदिर, होशियारपुर।
दिनाँक 16 अगस्त, 1976 ई.

प्रान की है मुख्यता और प्रान सबका सार है।
प्रान में बल शक्ति है, दोनों का यह भण्डार है॥
प्रान को समझो समझ कर, शब्द साधो प्रान संग।
साधना से सहज में, भव जल से बेड़ा पार है॥
प्रानक ाभ ीश ाब्दह ीहै ,स ारश ाब्दक ोभ ील ोप रख।
यह समझा आयेगी सतसंग, के वचन की धार से॥
प्रान के सबझे बिना, मत शब्द का अभ्यास कर।
फिर न छूटेगा कभी तू, जग के कगारा से॥
राधास्वामी गुरु की संगत, पहले कर फिर ले दया।
इसके पीछे शब्द साधन, मुक्ति ले संसार से॥

राधास्वामी! कल मेरे पास एक आदमी आया था और वह इस शब्द की व्याख्या चाहता था। व्याख्या तो मैं कर देता हूँ मगर व्याख्या की चाह किसको है? संतमत का मार्ग तो भवसागर में पार जाने का है। क्या तुम लोग भव सागर से पार जाना चाहते हो? सोचो! तुम लोग कोई किसी चाह को लेकर आया है कोई किसी चाह से आया है, ऐसे आदमियों के लिए संतमत की तालीम नहीं है। संत मत को हासिल करने का कोई-कोई अधिकारी होता है। कल यहाँ एक साधु आया था, कहने लगा कि बाबा जी! शान्ति नहीं है। आप का नाम सुनकर आप के पास आया हूँ, मैंने कहा कि मैं तुम को शान्ति नहीं दे सकता, जाओ! फिर मैंने सोचा कि यह उदास हो जायेगा। मैंने पूछा कि क्या तुम्हारी शादी हुई है 'नहीं'। क्या तुमको स्वप्न दोष होते हैं? ''हाँ'' क्या ब्रह्मचर्य खोते हो? ''हाँ'' तो फिर मैं तो क्या कोई भी तुम को शान्ति नहीं दे सकता। मैंने इन्कार कर दिया। यह साधन उनके लिए है।

विषयों से जो होय उदासा, परमारथ की जा मन आसा।
धनसंतान प्रीत नहिं जाके, खोजत फिरे साध गुरु जागे॥

यह नाम दान केवल उनके लिए है, सुन लो दोस्तो! *You people are not deserving hands for Santmat.* इसके लिए संयम है और नियम हैं।

जहाँ काम वहाँ नाम नहिं, जहाँ नाम नहिं काम।
रवि रजनी दोऊ ना मिलें, एक ठौर एक याम॥

हमारी अशान्ति का भी कारण है। वह क्यों अशान्त था? शादी उसने कराई नहीं, जिनकी समय पर शादी नहीं होती। वह भी अशान्त हो जाते हैं क्योंकि यह प्राकृतिक बात है। दूसरे उसका शारीरिक और मानसिक ब्रह्मचर्य गिरा हुआ था इसलिए उनके मन को शान्ति कहाँ? अब तुमने सवाल किया है, इसलिए मैं प्रान की व्याख्या किये देता हूँ। समझ सकते हो तो समझ लो।

प्रान की है मुख्यता और प्रान सबका सार है।

एक तो हम लोग अपने साँस को प्रान कहते हैं। लेकिन यह प्रान नहीं है, प्रान है हमारी ज़िन्दगी। अब अगर तुम ज़िन्दगी को देखना चाहो तो कैसे देखोगे? तुम खुद अपने अन्तर में विचार करो कि मन के अन्तर न कोई चाह रहे न कोई ख्याल आये, फिर बाकी जो कुछ रहेगा वह तुम्हारा प्रान है। इस का मतलब यह है कि तुम्हारी ज़िन्दगी तुम्हारा प्रान है। यह क्रियात्मिक जीवन का विषय है।

प्रान में बल शक्ति है, दोनों का यह भंडार है।

शरीर की जितनी भी शक्ति है सब तुम्हारे प्रान ही में है। जब तुम ज़िन्दगी को इकट्ठा करोगे तो तुम में शक्ति आ जायेगी।

प्रान को समझो समझ कर, शब्द साधो प्रान संग।

प्रान को समझ कर जब शब्द को सुनोगे तो मन से नहीं सुनोगे, जब शब्द को सुनोगे तो फिर कोई रूप, रंग, शक्ल-सूरत नहीं। यह अमली जीवन का मज़मून है *Practical Life* तो फिर जब तुम शब्द को सुनोगे तो फिर उस से क्या होगा साधना से सहज में, भव जल से बेड़ा पार है, ज़िन्दगी का साधन करने से भवजल खत्म हो जायेगा यानी भाव, विचार, ख्यालात वासनायें और इच्छायें सब खत्म हो जायेंगी। जब ज़िन्दगी से शब्द को सुनोगे तो यह मन का चक्कर तो खुद व खुद ही खत्म हो जायेगा। तब तुम्हारा बेड़ा पार होगा मन के चक्कर से निकल जाओगे, मन की चंचलता से निकल जाओगे, यही सन्तमत है और यही मन की अशान्ति को दूर करने का साधन है। बाकी जो कुछ किसी को मिलता है वो उस के अपने कर्म का फल है। कोई गुरु किसी को कुछ नहीं देता है, तुम सब भूल में हो, तुम्हारी ही श्रद्धा और विश्वास का फल तुम को मिलता है। अगर तुम्हारी *Will Power* ज़बरदस्त है तो तुम्हारे दुनिया के काम होते रहेंगे– यह अमरीकन औरत है यह दुखी थी मैं तो इस को जानता नहीं था वो कहती है कि वह अपने पति को खुदा समझती थी लेकिन पति ने

Divorce दे दिया अर्थात् तलाक दे दिया। जो कुछ इस के पास था वो भी पति को खुदा समझ के दे आई तो यह हिन्दू औरतों से भी बहुत अच्छी है। डॉक्टर आई. सी. शर्मा *(I. C. Sharma)* से इस की भेंट हुई और मेरा ध्यान करने लग गई। इस के अन्तर मेरा रूप प्रगट होने लग गया। इस ने बहुत चमत्कार देखे। मैं जब अमरीका गया तो इस ने चार सफे की चिट्ठी लिख कर भेजी, अपने चमत्कारों का उल्लेख किया, लिखती है कि बैंक में 200 डालर थे। मैं 25 डालर निकलवा के लाई।

तीसरे दिन देखा तो वे 178 डालर थे। भारत आना चाहती थी मगर पास में पैसा नहीं था। क्योंकि यह मेरा ध्यान करती थी इस ध्यान के कारण उस का यहाँ आने का प्रबन्ध हो गया और एक अमीर अमरीकन औरत भारत आई और अपने खर्च पर इस को भी साथ ले आई। बाबे फकीर को किस ने इस के अन्तर पैदा किया? इस की *Will Power* ने अब इस की इच्छा अनुसार इस के काम होते रहते हैं। तुम्हारा विश्वास काम करता है। यह सब प्रान का खेल है, कोई बाहर से नहीं आता न राम, न कृष्ण, न बाबा फकीर और न कोई और। यह सब दुनिया को धोखा दिया गया है और कोई भी सच्चाई ब्यान नहीं करता। सब तुम्हारा अपना विश्वास है। मेरे पास प्रति दिन पत्र आते हैं। मैं तो कुछ नहीं करता, लोगों का अपना ही विश्वास है। इसलिए एक का ध्यान करो। जिस का ध्यान बन जाता है उस की *Will Power* बढ़ जाती है और उस की इच्छा के अनुसार उसके काम होते रहते हैं, यह है कानून कोई जरूरत नहीं किसी गुरु के पास जाने की, खर्च करने की और टक्करें मारने की, क्यों अपना पैसा जाया करते हो। किसी कामल गुरु के पास जाओ ताकि वो तुम को सच्ची बात बतावे मैं सच्चाई बता रहा हूँ। बाहर के गुरु की यही महिमा है। ध्यान जो करेगा वो प्रान करेगा।

प्राण का भी शब्द ही है, सार शब्द को भी लो परख।

वो कहते हैं कि प्रान का भी शब्द है और जो असली शब्द है वो इस से आगे है। प्रान है ज़िन्दगी और ज़िन्दगी में तुम्हारा शरीर है और मन है। जो चीज़ इन में फिरती है यह प्रान है। सार शब्द प्रान से आगे है। उस को सुरत सुनती है। सुरत और चीज़ है, ज़िन्दगी और चीज़ है और मन और चीज़ है। शास्त्र कहते हैं कि अन्न मय कोश, मनोमय कोश, प्राणमय कोश, विज्ञानमय कोश और आनन्दमय कोश। सार शब्द आनन्द मय कोश से परे हैं। बग़ैर अमली ज़िन्दगी के इस की समझन हींअ ातीम गरस बसेय हअ भ्यासह ोगान हीं ि जनक ो सांसारिक इच्छायें है उन के लिए अभ्यास कैसा? कम से कम जब अभ्यास करते हो तो उस समय तो दुनिया के विचारों को छोड़ो। अगर ऐसा कर सको तब भी तुम्हारा काम बन जायेगा। दुनिया के बिना गुज़ारा नहीं मगर साधन के वक्त दुनिया के विचारों को भूल जाओ। लोग साधन के समय क्या करते हैं? कोई तो दौलत माँगता है, कोई पुत्र माँगता है और कोई कुछ माँगता है। यह संतमत का साधन नहीं है। अगर दुनिया की चीज़ें माँगते हो तो सुमिरन और ध्यान करो और रूप को अपने अन्तर प्रगट करो–

प्राण का भी शब्द ही है, सार शब्द को भी लो परख।
यह समझ आयेगी सतसंग, के वचन की धार से॥

यह समझ कैसे आयेगी? किसी कामल गुरु के सतसंग में जाओ, वचन सुनो, उन को गुनो और उन पर अमल करने से आदमी को यह समझ आती है।

प्राण के समझे बिना, मत शब्द का अभ्यास कर।
यह समझ आयेगी सतसंग के वचन की धार से॥

कितने ही आदमी अभ्यास करते हैं और शब्द भी सुनते हैं लेकिन शब्द सुनने के बाद क्या वो फिर दुखी नहीं होते? होते हैं? मैंने बहुत अभ्यास किया, बीनें सुनीं, शब्द सुने लेकिन जब बसरे बग़दाद से

वापिस आया तो फिर मैं कामी हो गया। मैं अनुचित ढंग से पैसा नहीं कमाता था लेकिन यह इच्छा तो मेरे दिल में भी थी कि मेरी तरक्की हो जाये। इसलिए सुरत शब्द योग सब के लिए नहीं है। गुरु लोग अपने मान–इज्जत के लिए और अपनी दौलत के लिए सब को नाम दिये जा रहे हें। लेकिन नाम का अधिकारी है कौन? इसलिए मैं किसी को नाम नहीं देता। केवल सतसंग कराता हूँ और अगर कोई मेरी बात समझ जाय तो उस का बेड़ा पार होना चाहिये।

राधास्वामी गुरु की संगत, पहले कर फिर ले दया।
इस के पीछे शब्द साधन, मुक्ति ले संसार से॥

गुरु की दया क्या है? पहले सत्संग कर और फिर दया ले। दुनिया यह समझती है कि गुरु ने दया कर के सब कुछ तुम्हारा कर देना है। गुरु की दया यह है कि उस ने वचन कह कर इन्सान की बुद्धि को निश्चय–आत्मिक बना देना है। लेकिन तुम लोग समझते नहीं हो और कोई तुम को सच्चाई भी नहीं बताता। यह बताने वाले भी बात को हेरफेर के इस तरीके से बताते हैं कि तुम उन के जाल से निकल न सको। इसलिए अगर कोई तुम को सच्चाई बताता है तो उस को समझते नहीं हो। गुरु ने फूँक नहीं मारनी। गुरु के वचन अगर तुम को निश्चय करा देते हैं तो वो गुरु की दया है।

तुम बेशक हज़ारों रुपये गुरु को दे दो लेकिन अगर तुम गुरु की बात को नहीं समझते तो वो गुरु की दया नहीं है। यह लेना देना तो संसार का व्यवहार है। रुपया देने से यह चीज़ नहीं मिलती। मैंने बहुत रुपया दिया, सोने के ताज बना–बना कर आरतियाँ करता रहा। लेकिन शान्ति नहीं मिली। तुम लोग तो भिखारी बन के मेरे पास आते हो लेकिन हम देने के लिए जाते थे। फिर भी शान्ति नहीं मिली। दया तो हजूर दाता दयाल जी महाराज की है लेकिन मुझे आप लोगों के अनुभवों से शान्ति मिली। हजूर दातादयाल जी महाराज ने यह काम मुझे देकर बात समझा दी, मैं न गुरु हूँ और न महात्मा हूँ। जब से मुझे

पता लगा कि मेरा रूप लोगों के अन्तर प्रकट होता है और उन के काम कर जाता है लेकिन मैं नहीं होता तो मुझे समझ आ गई कि मेरे अन्तर भी जो कुछ प्रकट होता है या भाव विचार और ख्यालात और रंग रूप आते हैं यह हैं नही मगर भासते हैं। सिर्फ इस एक ख्याल से मेरी ज़िन्दगी का तख्ता पलट गया और मुझे प्रान की समझ आ गई। जब रूप बन जाता है तो यह मनोमय कोश में कामयाबी है। प्रानमय कोश मन से बहुत आगे है।

गुरु की दया क्या है? मैंने जितनी दया संसार पर की है किसी ने नहीं की मगर लेता कौन है? तुम तो दुनिया की चीज़ों के लिये आते हो यह तो जो कुछ तुम को मिलेगा तुम्हारे कर्म का फल तुम को मिलेगा। कोई गुरु किसी को कुछ नहीं देता मगर किसी की निष्काम सेवा करने से जरूर मिलेगा। दुखिये की सेवा करो उस की मदद करो, भूखे को रोटी दो, प्यासे का पानी पिलाओ और नंगे को कपड़ा दो, इस का फल तुम को मिलेगा यह दुनिया का व्यवहार है। मगर इन बातों का प्रान के साथ या रूहानियत के साथ कोई सम्बन्ध नहीं लेकिन यह भी करो इस का सम्बन्ध दुनिया से है।

इस के पीछे शब्द साधन मुक्ति ले संसार से

फिर जब शब्द का साधन करोगे तो संसार तो खत्म हो जावेगा और मुक्ति खुद व खुद मिल जायेगी।

संसार क्या है? '**सम और सार**' हमारे मन के सामने जो कुछ आता है वो है संसार। जब मन के आगे चले गये तो संसार खत्म हो गया। मैं अभी तक भी स्वप्न में फँस जाता हूँ उस वक्त मुझे याद नहीं रहता कि मैं स्वप्न देख रहा हूँ। तुम लोग आये ही आज भादों महीने की संक्रान्त है। भादो महीना आप सब को मुबारक हो।

गुरु के मत में आके, गुरु गम पन्थ को पहचान ले।
गुरु की संगत कर के, गुरु का नाम ले गुरु ज्ञान ले॥

गुरु मत क्या है? गुरु नाम है समझ विवेक और ज्ञान का, गुरु की संगत में जा के आदमी को *Line of Actions* का पता लग जाता है कि मैंने ज़िन्दगी कैसे गुज़ारनी है ताकि मुझे सुख मिले। लेकिन सब के लिए एक ही कानून नहीं है क्योंकि सब की प्रकृति भिन्न-भिन्न है, सब की अवस्था अलग-अलग है और सब की ज़िन्दगी एक जैसी नहीं है। आज एक चेले को कोई हुकम देता है वो इस समय के लिये तो ठीक है मगर दस साल के बाद परिस्थितियाँ बदल जाती हैं फिर वो पहला हुकम जो गुरु ने दिया था वो फलदायक सिद्ध नहीं होता। इसलिए समय के अनुकूल वो भी बदलना पड़ता है। इस वास्ते सब के लिए इलाज भिन्न-भिन्न है। इस का सबूत देता हूँ। मेरी औरत घर में दुखी रहती थी उसने हजूर दातादयाल जी महाराज से प्रार्थना की। उन्होंने फरमाया कि तुम्हारा पति भी तुम को मिल जायेगा, बाल-बच्चे भी हो जायेंगे, धन दौलत और सब चीज़े मिल जायेंगी, मेरा हुकम मानो जो तुम को एक ताना दे उस को सोलह सुनाओ चाहे फ़कीर चन्द ही क्यों न हो, मेरे छोटे भाई से कहा कि तुम्हारे लिये नाम यह है कि '**जीवन का अर्थ काम और काम का अर्थ जीवन**' ***Life means work & work means Life.***

गुरु तो सब बन जाते हैं मगर गुरु बनना बहुत कठिन है। डाक्टर वो है जो बीमारी को देखकर उस का इलाज करे ऐसे ही गुरु बनना कोईअ ासानक ामन हीं,इ सलिएम ैंग ुरुन हींब नाग ुरुब ननेस े जिम्मेदारी आ जाती है। लेकिन चेले कहा नहीं मानते और फिर गुरु को बदनाम करते हैं।

एक गुरु महाराज के पास एक सेना का कैप्टन आया और कहने लगा कि महाराज मुझे ईश्वर से मिला दीजिए। उन्होंने फरमाया कि मिला दूँगा। उस ने अपने गुरु को दस हजार रुपया दिया और उनकी कार दस साल तक चलाता रहा लेकिन उस को न प्रकाश आया और न

शब्द। उसने अपने गुरु जी पर चालीस हज़ार रुपये का दावा करार कर दिया। आखिर कुछ आदमियों ने बीच बचाव कर के फैसला करा दिया। कुछ देर के बाद वह मेरे पास आया और उसने यह बात बड़े अभिमान के साथ सुनाई कि मैंने अपने गुरु जी पर चालीस हज़ार रुपये का दावा किया था। मैंने उस से कहा कि तुम को न प्रकाश आ सकता है और न शब्द। वो हैरान होकर कहने लगा कि क्यों? मैंने कहा कि क्या तुम्हारी शादी हुई है? नहीं। क्या तुम अपना वीर्य जाया करता हो? हाँ, तो फिर प्रकाश और शब्द कैसे आ सकता है, वो कहने लगा कि यह बात किसी ने मुझे बताई नहीं। फिर गुरु जी महाराज क्या करते। जब कि तुम ने अपना दोष दूर नहीं किया और सुनो, ज़िला रोहतक का हज़ूर दाता दयाल जी महाराज का एक शिष्य था, बहुत प्रेमी था। हज़ूर दातादयाल जी महाराज ने उसकी ज़मीन में एक कुटिया बनवाई। छः महीने वहाँ रहे और कबीर-योग लिखा। उस समय उन के प्रसाद से तीन चार टी. बी. के रोगी राज़ी हो गये। उस आदमी के भाई को भी टी. बी. थी। उसने भी अपने भाई के लिये प्रसाद लिया, दाता ने फरमाया कि राज़ी हो जायेगा। लेकिन वो मर गया। उस आदमी ने हज़ूर दातादयाल जी को बहुत बदनाम किया। इन बातों ने मुझे सच्चाई ब्यान करने के लिए विवश किया।

मैं सन् 1931 में हज़ूर दातादयाल जी महाराज की आरती करने गया वापसी पर मेरा भतीजा भी साथ था। देहली में हम दोनों टाँगे से गिर गये और लड़के के पाँव पर से बैलगाड़ी का पहिया निकल गया और पाँव पर बहुत चोट आई। वहाँ मेरे पास एक आदमी जो कि पोस्ट एण्ड टैलीग्राफ के महकमे का अफसर था और हज़ूर दातादयाल जी महाराज का शिष्य था मुझे मिलने के लिए आया और उसने मेरी सेवा भी की। मैंने वहाँ से वापस आकर उसको खत लिखा कि मैंने तुम को देहली में देखा तुम कोरे के कोरे हो। अब मैंने हज़ूर दातादयाल जी

महाराज की जगह काम करना है अगर कुछ चाहते हो तो मेरे पास फरीदकोट आओ। उसने मुझ लिखा कि चूँकि आप में सच्चाई है इसलिए मैं आप को मानता हूँ। मैंने पण्डित ब्रह्म शंकर जी महाराज से नाम लिया है फिर और गुरुओं के पास भी गया लेकिन सबने मुझे सब्ज़ बाग़ दिखाया और मुझे मिला कुछ नहीं। उसने कहा मैं नहीं आऊँगा अगर आप के पास कुछ है तो यहाँ आकर मुझे दे जाओ। कुछ दिनों के बाद मैं देहली गया। जब उसके मकान पर गया तो वो खाना खा रहा था, मैंने कहा कि तुम ने गुरुओं को बहुत बदनाम किया है। अब मैं यहाँ केवल तुम्हारे ही लिये आया हूँ यह खाना जो तुम खा रहे हो इस खुराक से तुम्हारा न प्रकाश खुलेगा और न शब्द। दूसरी बात यह है कि तुम कामी हो। वो कहने लगे कि आप सच फरमा रहे हो। मैंने कहा कि फिर तुम को प्रकाश और शब्द कैसे आ सकता है? फिर उसने अपने दामाद के बारे में मुझे कुछ कहा, मैंने जबाव दिया कि दामाद ने अपना कर्म भोगना है। कर्म सब को भोगना पड़ता है। क्या सन्तों ने अपना कर्म नहीं भोगा? क्या मैं बीमार नहीं होता? दुनिया ने गुरुमत को समझा नहीं इसलिए मैं सन्तमत को साफ कर रहा हूँ। और इस अनुभव के आधार पर तालीम को बदल रहा हूँ। अब मैं जब सच्चाई ब्यान कर रहा हूँ तो मेरा विरोध कोई क्या करेगा।

एक दफा मेरे पास एक बंगाली साधु आया। मैंने कहा कि तुम कौन हो? कहने लगा कि ब्रह्मचारी। क्या चाहते हो? शान्ति। मैंने उस को देखा और कहा कि कौन कहता है कि तुम ब्रह्मचारी हो? क्या तुम ने अपने हाथ से अपना वीर्य नहीं खोया? जी हाँ! तो फिर मैं क्या करूँ? मैं तो क्या कोई भी तुम को शान्ति नहीं दे सकता, जो मेरी समझ में आया उस को बता दिया इसलिए जब तक किसी का शारीरिक और मानसिक ब्रह्मचार्य कायम नहीं है उसको शान्ति नहीं मिल सकती। किसी को क्या कहूँ मेरा खुद यही हाल था। मैं बहुत प्रेमी था और भक्त

था मगर शान्ति नहीं थी। क्यों? छोटी उमर में शादी हो गई और गृहस्थ में पड़ गया। फिर बारह साल बसरे बगदाद औरत से दूर रहा और मेरी ब्रह्मचर्य की कमी पूरी हो गई और प्रकाश और शब्द खुल गया। लेकिन इसका यह मतलब नहीं कि अगर प्रकाश और शब्द नहीं आता तो तुम परमार्थ को हासिल नहीं कर सकते यह गलत है।

हमने साधन से मन की वृत्तियों को स्थिर करके ज़िन्दगी के अहसासात का अनुभव करना है। मगर जिन को भ्रम आ गया है उन को मैं क्या करूँ? मतलब तो ज़िन्दगी को बेफिक्री, बेग़मी और खुशी से गुज़ारना है। यह गुरु बेहतर जानता है कि जीव की वृत्ति किस तरीके से ठहर सकती है। सब के लिए अभ्यास नहीं है और ना ही साधन लक्ष्य है। अगर मैं ने वही काम करना होता जो दूसरे गुरु करते हैं तो मुझे नई दुकान खोलने की क्या ज़रुरत थी। मैं हूँ संत सतगुरु वक्त और मेरी सारी ज़िन्दगी खोज में गुज़री है। चूँकि हज़ूर दाता दयाल जी महाराज ने हुकम दिया था कि चोला छोड़ने से पहले तालीम को बदल जाना इसलिए मैं यह सच्चाई ब्यान कर रहा हूँ। हज़ूर बाबा सावन सिंह जी महाराज ने भी एक दफा फरमाया था कि अगर मेरा दूसरा जन्म हुआ तो मैं बाल-ब्रह्मचारी रहूँगा। वो अपनी कमज़ोरी को जानते थे मगर कोई महात्मा अपनी कमज़ोरी को ब्यान नहीं करता।

गुरु के मत में आके, गुरु गम पन्थ को पहचान ले।
गुरु की संगत कर के, गुरु का मर्म ले गुरु ज्ञान ले॥

गुरु गम में क्या, यह ज्ञान गुरु की संगत से मिलता है। वो फरमाते हैं कि गुरु की संगत में जा के यह ज्ञान और यह भेद हासिल करो।

गुरु है ब्रह्मा गुरु है विष्णु, गुरु शिव की मूरती।
ब्रह्म है परब्रह्म, गुरु से गुरु को जान ले॥

गुरु ब्रह्मा क्या है? कि यह रचना कैसे होती है। यह स्थिर कैसे होती है, इस का नाम गुरु विष्णु है और यह नाश कैसे होती है इसका नाम गुरु शिव है। यह ज्ञान किसी कामल गुरु की संगत से प्राप्त होगा।

गुरु मिले सब कुछ मिला, अब किस की मन में चाह हो।
अर्थ धर्म और मोक्ष की, और कामना की खान ले॥

मैं अपने-आप से पूछता हूँ कि क्या अब तुमको किसी चीज़ की चाह नहीं है? क्या मिला तुम को फकीर? आप लोगों की दया से मुझे यह मिला कि मैं कौन हूँ अब अपने अन्तर में उस चीज़ को तलाश करता हूँ जो प्रकाश को देखती है और शब्द को सुनती है, उस का अन्त नहीं मिलता। मैं कई दफा सोचता हूँ कि मैं कुछ बन गया? बनना क्या है, मैं तो चेतन का एक बुलबुला हूँ, इस ज्ञान से मुझे यह मिला कि अब मुझे किसी चीज़ की चाह नहीं रही, जो कुछ हो रहा है वह ठीक हो रहा है। जिस ने मरना है उसने मरना ही है, काहे का फिकर और काहे की चिन्ता? इस ख्याल से कि मैं कौन हूँ मुझे शान्ति मिली, मुझे यह समझ आई है कि वो एक परम तत्व है और मैं एक चेतन का बुलबुला हूँ। इस में एक "**मैं**" आ गई और उसने सारा खेल खिलाया। अब अर्थ का पता लग गया कि इच्छा करो, ध्यान करो और मन को यकसु करो, जो माँगोंगे मिलेगा, मगर जो पहले किया हुआ है उस का फल भी तो भोगना पड़ेगा। जब तक उस को नहीं भोगोगे, आगे कैसे जाओगे?

ज्ञान भक्ति दोनों गुरु के, आसरे हैं यह समझ।
गुरु दया से दोनों पाले, जीते जी निरवान ले॥

गुरु ने फूँक नहीं मारनी, गुरु ने तो वचन कहना है और तुमने उसको समझ कर उस पर अमल करना है, तुम्हारे विश्वास और तुम्हारी श्रद्धा का ही फल तुम को मिलना है-

राधास्वामी सन्त सतगुरु, रूप में परगट हुये।
लै शरन अब पद कमल में, झुक के मेरी मान लें॥

– सब को राधास्वामी

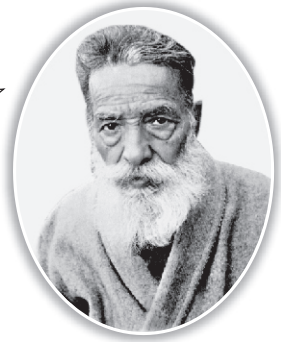

गुरु पूर्णिमा

सतसंग हुजूर परमदयाल जी महाराज

मानवता मंदिर, होशियारपुर।

दिनाँक 14 जुलाई, 1973

जारों में या जग की चतुराई

सांई को नाम न कबहूँ सुमिरै जिन यह जुगति बताई॥
जोड़त दाम काम अपने को, हम खेहैं लरिका बिलसाई॥
सो धन चोर मूसि लै जावैं, रहा सहा लै जाय जमाई॥
यह माया जैसे कलवारिन, मद्य पियाय राखै बौराई॥
इक तो पड़े धूरि में लोटैं, एक कहैं चोखी दे भाई॥
सुरनर मुनि माया छलि मारे, पीर पगम्बर को धरि खाई॥
कोई इक भाग बचे सत संगति, हाथ मलै तिन को पछिताई॥
कहैं कबीर सुनो भाई साधो, लै फाँसी हमहूँ को आई॥
गुरू की दया साध की संगति, बचिगे अभय निसान बजाई॥

राधास्वामी! आप लोग गुरू पूर्णिमा के सम्बन्ध में आए हैं। गुरू पूर्णिमा तो कल को है। मैं सोचता हूँ कि तू गुरू बनके बैठ गया और अपनी पूजा करवाता है। क्या पूजा करवाने का तुम्हें अधिकार है? रात को यह ख्याल मेरे दिल में आया कि लोग गुरू पूजा करने के लिए अथवा तेरी पूजा करने के लिए तेरे पास आ रहे हैं। तेरा क्या अधिकार है? गुरू मत का भेद तो मैं देता हूँ और सच्चाई वर्णन करता हूँ किन्तु यह भेद लेने के लिए मेरे पास कौन आता है? सब संसारी इच्छाओं के लिए आते हैं। मैं अपनी आत्मा से पूछता हूँ कि वह कौन सा भेद, कौन सी सच्चाई और कौन सा रहस्य है जो तुमको मिला है? कल के सतसंग में एक शब्द पढ़ा गया था–

कोई बता दे कैसे गुरू को रिझाऊँ
मेरे मन में मेरे तन में छिन छिन पल पल मेरे मन में
घर बाहर पर्वत और वन में, ठौर ठौर गुरू पाँऊ॥

आप लोग गुरू पूर्णिमा पर आए हैं। आप किस की पूजा करना चाहते हैं? यह शब्द दाता दयाल जी महाराज ने लिख कर मुझे बगदाद में भेजा था। उस वक्त मुझे इसकी समझ नहीं आती थी। संसार में आपा-पंथी फैल गई और भर्म छा गया है।सनातनी कहते हैं कि राम घट-घट में रम रहा है। कोई कहता है कि विष्णु हर जगह व्यापक है। कोई कहता है कि शिवजी हर जगह मौजूद है। जिस पर किसी का विश्वास है वह उसी को सब कुछ समझता है और उसी के गुण गाता है। लेकिन क्या ऐसा कहने से, ऐसा मान लेने से अथवा ऐसा निश्चय कर लेने से मनुष्य के अन्तर कोई खोज शेष नहीं रहती? हर एक पंथ वाला अपनी आत्मा से पूछे। कहने को तो सब कह देते हैं कि **''सब जगह व्यापे राम ही राम''**। उन्होंने राम कह दिया और किसी ने गुरू

कह दिया। विश्वास कर लेने से तुमको आनन्द और खुशी मिलती है। किन्तु शान्ति नहीं मिलती। व्यक्ति को क्रियात्मक रूप से अपने जीवन को देखना चाहिये। वेदान्ती कहते हैं सभी आभूषण सोना ही हैं अर्थात् अँगूठी भी सोना है। कड़े भी सोना है और काँटे भी सोना है किन्तु क्या ऐसा कहने से व्यक्ति के मन को शान्ति मिलती है? बगदाद में यह शब्द सुनने से क्या मुझे शान्ति मिली? मनानन्द, प्रेमानन्द और ज्ञानानन्द तो मिला मगर शान्ति नहीं मिली। आप लोग आए हैं मैं अपनी जिम्मेवारी को समझता हूँ। मैं केवल मत्थे टिकाने और अपनी पूजा कराने के लिए यहाँ नहीं बैठा हूँ। यह और बात है कि आप लोग यहाँ मन्दिर में चार पैसे दे जाते हैं इस शिक्षा को फैलाने के लिए यहाँ रुपए की आवश्यकता भी है। यह मगर मेरे पिछले जन्म के खोटे कर्म है जो मैंने यह मन्दिर बनाया है। बुद्धि का खेल तब तक समाप्त नहीं होता जब तक मेरे अनुभव के अनुसार और कबीर साहब के कथन के अुनसार व्यक्ति को यह निश्चय नहीं हो जाता कि यह सब माया है। यह किताबें लिखना और उपदेश करना भी सब बुद्धि का काम हैं। जैसी-जैसी जिसकी बुद्धि है वह उसी के अनुसार बात करता है-

जारौं मैं या जग की चतुराई
सांई को नाम न कबहूँ सुमिरै जिन यह जुगति बताई ॥

जो सारे संसार का आधार है उस साईं को तो कोई स्मरण नहीं करता। मैं बचपन से ही उसे स्मरण किया करता था। पहले उसको राम के रूप में स्मरण किया करता था। कभी कृष्ण के रूप में स्मरण किया करता था, कभी हुजूर दाता दयाल जी के रूप में मानता था, कभी शब्द और प्रकाश के रूप में उसको मानता था। मगर बुद्धि से ही मानता था न कि राम और कृष्ण ब्रह्म के अवतार हैं। बुद्धि से ही हजूर

दाता दयाल जी महाराज को मालिक मानता था ना। इसलिए जो कुछ मैंने किया था वह सब बुद्धि का ही खेल था। जिसने यह सारी जुगत बनाई है उसको तो कोई भी नहीं जानता। तुम जो कुछ भी करते हो वह बुद्धि से ही तो करते हो और यह बुद्धि ही माया है।

जोरत दाम काम अपने को हम खेहै लरिका बिलसाई।
सो धन चोर मूसि लै जावे, रहा सहा लै जाए जमाई ॥

हम अपनी बुद्धि से कोई न कोई यत्न करके धन इकट्ठा करते हैं कि हमारे बच्चों के काम आएगा। इस धन से हम यह करेंगे हम वह करेंगे किन्तु उसको चोर ले जाते हैं और हम दु:खी हो जाते हैं।

यह माया जैसे कलवारिन मद्य पियाय राखै बौराई।

यह मद्य पिला कर पागल बना रखना क्या है? बुद्धि के चक्कर में अर्थात् माया के चक्कर में आकर जैसे मैं राम को ब्रह्म का अवतार समझता था अथवा दाता दयाल जी महाराज को भगवान् का अवतार मानता था। सब पीर-पैगम्बर भी इसी चक्कर में रहे।

इक तो पड़े धूरि में लोटैं, एक कहैं चौखी दे भाई।
सुर नर मुनि माया छलि सारे, पीर पैगम्बर को धरि खाई ॥

सुर नर मुनि और पीर पैगम्बर सब को इस माया ने खाया। यह वाणियाँ मैंने बचपन में पढ़ी थीं और उस जगह की खोज करते-करते मैंने सारी आयु खो दी। जिसके बारे सन्त कहते हैं कि वहाँ माया नहीं है।म ुझेइ सकीस मझन हींअ ातीथ ी।इ सम ायाक ीस मझब ूझ सतसंगियों! तुम्हारी दया से आई। जब से मुझे यह ज्ञान हुआ कि मेरा रूप लोगों के अन्तर प्रगट होता है किसी को पुत्र दे जाता है, किसी को दवाई बता जाता है, किसी को मरते समय ले जाता है किन्तु मैं तो होता नहीं। इसीलिए मैं यह मानने को विवश हो गया कि मेरे अन्तर भी जितने भाव विचार और रंग रूप पैदा होते हैं, वह क्या सिद्ध हुए?

माया। आप लोगों गुरू पूर्णिमा पर मेरी पूजा करने आए हैं और मैं आप लोगों को सतगुरू मानकर आपकी पूजा करता हूँ। दाता दयाल जी महाराज ने मुझे बहुत समझाया। मगर मेरी समझ में बात आती नहीं थी। अब जो कुछ मैं समझा हूँ वह आप लोगों को बता रहा हूँ किन्तु आप इसके अधिकारी नहीं है। क्यों? क्या आप परमार्थ के लिए आते हैं? आप लोगों को तो संसार की वस्तुएँ धन, वैभव और मान चाहिए। यह व्यक्ति जिला मेरठ से आया हुआ है। क्यों? इसके भाई पर हत्या करने का दोष था। यह लोग मेरे पास आए। मैंने कहा कि विश्वास करो वह बच जाएगा। इन्होंने भी बहुत यत्न किया और व्यय किया और वह बरी हो गया। अब यह समझता है कि बाबे ने इसको बचाया है। मैं अपने-आप से पूछता हूँ कि क्या तुने उसको बचाया है? उसने बचना था चूँकि मेरा हृदय शुद्ध इसलिए होने वाली बात मुख से निकल जाती है। इस समय सारे पंथ **''मैं पने, अहं''** के चक्कर में आए हुए हैं और सार तत्त्व कोई समझता नहीं है। जो स्वयं नहीं समझता है वह दूसरों को क्या बताएगा?

आज एक व्यक्ति आया कहने लगा कि बाबा जी! मेरे भाई के सन्तान नहीं है, उसके वीर्य में कीटाणु नहीं है। आप प्रसाद कर दीजिए ताकि उसके सन्तान हो जाए। मैंने कहा कि मैं क्या करूँ? उसने कहा कि आप सब कुछ कर सकते हैं। संसार भर्म में है। मेरी अपनी लड़की की शादी को अठारह साल हो गए है उसके कोई औलाद नहीं है यदि मेरे बस में होता तो उसके सन्तान हो जाती। संसार माया के चक्कर में है। गुरू मत संसार को माया से निकालने के लिए आया था मगर स्वयं फँस गया, विश्वास में बहुत शक्ति है। विश्वास से सब कुछ हो सकता है और होता है। मैं कुछ नहीं करता। यह बिल्कुल सच्ची बात है। यदि मुझ में कोई शक्ति भी है तो मैं अपनी शक्ति का इन झूठी बातों में अथवा किसी को बच्चा देने में क्यों खर्च करूँ? आप लोगों को मुझ

पर क्या अधिकार है? यह सब माया का चक्कर है। कोई मान के लिए यत्न कर रहा है, कोई धन के पीछे दौड़ रहा है। सारा संसार आशाओं में ग्रस्त पागल हो रहा है।

मैं सोचता हूँ कि फकीर चन्द! तुमने यह क्या मकड़ी का जाल बना रखना है? नहीं। मैंने यह जाल तुमको फँसाने के लिए नहीं किन्तु तुमको निर्बन्ध करने के लिए बना रखा है। मैं आप लोगों को सत्य ज्ञान देता हूँ। क्या सत्य ज्ञान? कि ऐ इन्सान! तेरे मन के जितने खेल हैं यह सब माया है। अगर तू इस माया से निकलना चाहता है तो उसको याद कर जो इस माया से भिन्न है। माया से भिन्न कौन है और माया में फँसा हुआ कौन है? वह है तेरा अपना ही आप अथवा तेरा अपना ही अस्तित्व। मैं आप ही माया में फँसा हुआ हूँ, तो इस माया से निकलने के लिए मुझे किस को याद करना चाहिए? क्या राम को याद करना चाहिए? क्या कृष्ण को याद करना चाहिए? क्या दाता दयाल जी महाराज को याद करना चाहिए? इनको तो हमारी बुद्धि ने माना हुआ है। अपनी जात को समझ कर उसमें ठहर जाना और माया के चक्कर में न आना- यह है सच्चा ज्ञान जो मैं संसार को बताना चाहता हूँ। मैं दाता दयाल जी महाराज के प्रेम में मस्त था। वह मुझे क्या लिखते हैं-

कोई बतादे कैसे गुरू को रिझाँऊ
मेरे तन में, मेरे मन में, छिन छिन पल पल मेरे मन में

मेरे तन और मन में कौन सी चीज़ रहती है? पहिले तो मैं समझता था कि दाता दयाल जी लाहौर में बैठे हैं और मेरे तन और मन में रहते हैं। आप लोगों की दया से मुझे यह समझ आई कि तन और मन में रहने वाला मैं आप हूँ इसलिए गुरु पूजा कर केवल अपनी ही जात की पूजा है। जिस पवित्र विभूती से यह ज्ञान मिला उसका धन्यवादी हूँ। आप लोगों की दया से, लोगों की घटनाओं और अनुभवों में मेरे जीवन

का आदर्श बदल गया। हो सकता है कि यह सारे का सारा गलत हो। मुझे इस बात का कोई दावा नहीं है।

मेरी सारी जिन्दगी सच्चाई की तलाश में गुजर गई। चूँकि मन महाचंचल है और और मैं गृहस्थी हूँ इसलिए बाह्य प्रभाव के कारण माया घात करती रहती है। क्योंकि मुझे इस माया के रूप का ज्ञान है इसलिए इससे बचने के लिए राधास्वामी नाम एवम् गुरू स्वरूप का सहारा लेता हूँ ताकि बाह्य प्रभाव से बच जाऊँ।

आप लोग आए हैं। रात को मैं सोचता था कि फकीर! तूने क्या आडम्बर रचा लिया है? यह मेरा अपना कर्म भोग है। इन वाणियों ने मुझे पागल बनाया हुआ था, दु:खी रहता था, सत्यता को जानना चाहता था। अब समझ आई कि मेरा अपना आप ही सब कुछ है। यह क्या है? बस वह है! उसका वर्णन करने के लिए कोई शब्द नहीं। यदि कोई शब्द कहूँ तो वह माया हो जाएगी। जिस अवस्था का अनुभव मैंने किया है वहाँ अभी तक ठहरा नहीं आता। यह मेरी कमज़ोरी समझो अथवा मेरे कर्म समझो। इसलिए सुमिरन ध्यान और भजन का सहारा लेता रहता हूँ और जब कभी वहाँ पहुँच जाता हूँ तो फिर न सुमिरन रह जाता है, न ध्यान रह जाता है और न भजन ही रह जाता है। अभी तक मुझ से वहाँ ठहरा नहीं जाता। हो सकता है दूसरे सन्त ठहर जाते होंगे।

आप लोगों के लिए है एक ख्याल, एक आस, एक विश्वास और एक भरोसा। मैं यह नहीं कहता कि मेरा विश्वास रखो। नहीं। जो नाम तुमको तुम्हारे गुरु ने दिया है अथवा जो सुमिरन और ध्यान तुमको मिला हुआ है उसका सहारा लो। मेरी समझ में तो यह बात आई है। मैंने जो कुछ कहना था वह कह दिया अब मेरी आत्मा पर कोई बोझ नहीं है।

सब को राधास्वामी।

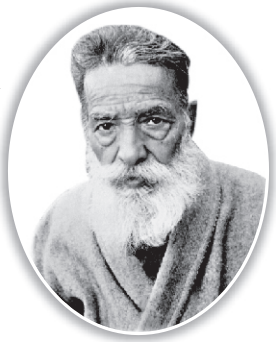

गुरु पूर्णिमा

सतसंग हुजूर परमदयाल जी महाराज मानवता मंदिर, होशियारपुर।

दिनाँक 15 जुलाई, 1973

मंगलम् अशब्द अरूप, शब्द रूप स्वामी।
मंगलम् अलख अनाम, अगम नाम नामी॥

मंगलम् ऐ दीन बन्धु, दीनानाथ दाता।
मंगलम् अभेद भेद आनन्द धन त्राता॥

महिमा अनन्त, आदि अन्त कौन गावे।
भेद तेरा कौन जाने, कौन कह सुनावे॥

सन्त भेष प्रगट जगत, जीग को चिताया।
काल कर्म फन्द काट, धुर ले पहुँचाया॥

प्रथम तत्व निज स्वरूप, पद कमलनमानी।
गाऊँ ध्याऊँ रात दिवस, भजूं राधा स्वामी॥

राधास्वामी। अपनी आत्मा से पूछता हूँ, तूने यह क्या किया फकीर? लोग तुम को मत्थे टेकते हैं। फूलों के हार तुम्हारे गले में डालते हैं। तुमको कपड़े देते हैं और रुपए देते है। यह जो कुछ तुम करते हो, मित्रो! यह तुम्हारा अपना ही विश्वास, प्रेम और श्रद्धा है। मैंने भी यह काम बहुत किया हुआ है। आज गुरु पूर्णिमा है। यह मानवीय प्रकृति है कि जहाँ से उसे कोई वस्तु मिली हुई होती है अथवा प्राप्ति की आशा होती है उसका वह उपकार मानता है।

हिन्दुओं में कई प्रकार की पूजा होती है। एक वर पूजा होती है। कहीं सास पूजा होती हैं जिस को करवाचौथ कहते हैं। एक भाई-दूज है, उसमें बहिन भाई की पूजा करती है। इसी भाँति ऋषियों ने गुरु पूर्णिमा पर गुरु पूजा की रीति चलाई। अपने-आप से पूछता हूँ कि फकीर! तुम गुरु की क्या पूजा करना चाहते हो? क्या गुरु ने तुम को कुछ दिया है? यदि नहीं दिया तो क्या तुम को कुछ प्राप्ति की आशा है?

मुझे क्या मिला? बचपन से ही मुझे किसी वस्तु की खोज थी और मैं कुछ चाहता था, उस चाह को कोई राम कहता है, कोई कृष्ण कह देता है, कोई उसको शान्ति कह देता है, कोई उसको मुक्ति कह देता है एवम् उसको मोक्ष कह देता है। इस खोज के क्रम में, चूँकि मैं ब्राह्मण वंश का था, मैं मूर्तिपूजा किया करता था, माला जपता था एवम् विष्णु सहस्रनाम का पाठ किया करता था। मैंने बहुत कुछ किया। क्योंकि मुझे खोज थी। अत: सबसे प्रथम मुझे रामायण से संस्कार मिला। आज मैं जहाँ पहुँचा हूँ, यह सब रामायण के कारण हुआ है। क्योंकि श्री तुलसी दास जी ने रामायण लिखी है। अत: मैं कृतज्ञ हूँ आज उनके चरणों में नमस्कार करता हूँ। सर्वप्रथम मैं अपने भाई पण्डित श्री रामनारायण को नमस्कार करता हूँ। जिनके कारण मैं इस ओर आया।

पन्द्रह वर्ष की आयु से, मैंने छ: महीने माँस खाया तीन बार शराब पी तथा एक बार वेश्या के पास गया। यह घटना सन् 1904 ई. की है उस वर्ष कांगड़े का भूचाल आया था और सर्दी बहुत पड़ती थी। मेरे बड़े भाई पण्डित श्री रामनारायण प्रतिदिन प्रात: काल बर्फ तोड़ कर स्नान करते थे और पाठ किया करते थे परन्तु जब मैं प्रात: उठता था तो मेरे सामने एक माँस का कटोरा रख जाता था। भाई राम नारायण माँस को मेरे सामने देख कर अपना नाक और मुँह कपड़े से ढक कर मेरी थाली में दूर से ही फुल्का फैंक देते। जब मैंने उनका व्यवहार देखा तो मुझे विचार आया कि फकीर! तुम दोनों एक ही कुल के हो। तुम किधर जा रहे हो और तुम्हारे भाई साहब किधर जा रहे हैं? मैंने बहुत पश्चाताप किया कि मेरे पाप धुल जाएँ। अत: आज सबसे पहिले भाई श्री राम नारायण जी का आभारी हूँ। सन्त तुलसीदास जी की रामायण पढ़ी। आप लोगों ने भी पढ़ी होगी। परन्तु आप लोगों ने तो न जाने क्या शिक्षा ग्रहण की हो मैंने रामायण में केवल एक विचार लिया कि-

मैंने यह सोचा था कि यदि राम मिल जाएँ तो पापों से मुक्त हो जाऊँ। यह मेरे मस्तिष्क में एक भावना थी। तीसरी गुरु, मेरी माता जी थी। उनको नमस्कार करता हूँ। वास्तव में प्रत्येक माता अपने बच्चों की गुरु होती है। जब मैंने माँस छोड़ा तो उस समय मैं सिल्लांवाली रेलवे स्टेशन पर था। एक दिन घोड़े पर जा रहा था तो मार्ग में मुझे वहाँ के लोगों का एक सरदार मिला और उसने आग्रह पूर्वक मुझे एक मुर्गी का बच्चा लाकर दिया। मैं उस को ले आया। एक आदमी से कहा कि इसको मार कर साफ करके ला दे। जब वह ले आया तो मैं उसे घर में ले गया और अपनी स्त्री को उसे पकाने के लिए कहा। जब माता जी ने देखा तो वह रसोई में चली गई तथा अन्दर से द्वार को बन्द कर दिया। हमको मसाले की आवश्यकता पड़ी और मसाला उसी कमरे में था।

माता जी से द्वार खोलने को कहा, परन्तु उन्होंने नहीं खोला। हमने सोचा कि माता जी कहीं दम घुट के मर न जाए हमने कुल्हाड़ी से द्वार को काट कर खोल दिया। मैं माता जी से बहुत प्रेम करता था, मैं अन्दर जाकर माता जी से लिपट गया और कहा कि यदि आप अन्दर मर जाती तो मैं माँ कहाँ से लाता? उन्होंने क्रोध वश मुझे पीछे हटा दिया और कहा कि तुम्हारे स्थान पर मेरे उदर से यदि पत्थर उत्पन्न होता तो अच्छा था। तुम जब बीमार होते थे तो मैं बहुत उपाय किया करती थी। अब तुमने जिस माँ के बच्चे को मार दिया है उस माँ का क्या हाल होगा? माता जी के यह शब्द सुन कर मैं अत्यन्त लज्जित हो गया तथा माता जी के सम्मुख मैंने प्रण किया कि भविष्य में कोई पाप नहीं करूँगा।

कुछ समय के पश्चात् दाता दयाल जी महाराज का दृश्य आया और मैं उनके दरबार में गया और उनको राम समझ कर पूजा। वह मुझे गुरु मत की ओर ले आये। उन्होंने मुझे वाणी पढ़ने को दी। मुझे इन की समझ नहीं आती थी कि योग क्या है तथा सहस्रदल कमल त्रिकुटी, सुन्न, महासुन्न और भ्रवर गुफा इत्यादि क्या है? उन्होंने कहा था कि वाणी पढ़ा करो तब तुम्हारा कल्याण होगा। उस समय मैंने प्रण किया था कि इस मार्ग पर सच्चा होकर चलूँगा और जो कुछ मेरा अनुभव होगा वह संसार को बता जाऊँगा। सन्तों की वाणी में आता है कि वेदव्यास भी नहीं पहुँचे, वसिष्ट जी भी नहीं पहुँचे। राम तथा कृष्ण भी ब्रह्म से आगे नहीं गए। इन बातों से मेरे हृदय को धक्का लगा। क्योंकि मैं दाता दयाल जी महाराज को तो छोड़ न सका, अत: मैंने यह प्रण किया था कि अपना अनुभव कह जाऊँगा हो सकता है दाता दयाल जी महाराज ने मुझे यह काम इसीलिए दिया हो।

दाता दयाल जी महाराज मुझे बहुत समझाया करते थे परन्तु सैन बैन में अत: बात मेरी समझ में नहीं आती थी कि सन्तमत क्यों सब से

ऊँचा है तथा शेष सब मत मतान्तर काल मत में हैं। मैंने सन्त मत की यह नवीन वस्तु जानने का बड़ा प्रयत्न किया। एक बार मैंने सन् 1919 ई. में दाता दयाल जी महाराज को बहुत कष्ट दिया और कहा कि महाराज! मुझे वह घर दिखा दीजिए जो आपका सन्तमत कहता है कि वहाँ पहुँचना है। कहा कि कल प्रात: काल बताऊँगा। दूसरे दिन प्रात: को उन्होंने मेरे माथे पर तिलक लगा कर मेरी झोली में एक नारियल और पाँच पैसे डाल दिये तथा मेरे पाँव पर मत्था टेक कर कहा कि मेरी आज्ञा का पालन करो सतसंग कराओ और नाम दान दो तुमको सच्चे सतगुरू के दर्शन सतसंगियों के रूप में होंगे। मैंने उनका आदेश मानकर यह काम किया। अब बात मेरी समझ में आ गई। अब मैं किसका उपकार मानता हूँ? अब दाता दयाल जी महाराज तो है नहीं, न मेरी माता जी है एवम् न मेरे भाई साहिब ही हैं, परन्तु मैं उनका कृतज्ञ हूँ। अब आप लोगों की दया से मुझे सन्त मत अथवा गुरू मत की सत्यता का ज्ञान हुआ है। अत: आज आप लोगों को अपना सच्चा सतगुरू मानकर आप सब को नमस्कार करता हूँ। मैं मालिक को अथवा अपने आदि को ढूँढता था, इसीलिए मौज़ मुझे दाता दयाल जी महाराज के पवित्र चरणों में ले गई। तुम लोग जो मेरे पास आते हो। तुम तो इस लिए मेरे पास नहीं आते, तुम लोग तो सांसारिक वस्तुओं के निमित्त आते हो।

आज गुरु पूर्णिमा है। जो रहस्य मुझे सतसंगियों द्वारा प्राप्त हुआ और जिसके कारण मुझे यह विश्वास हो गया कि सचमुच संत मत सब से ऊँचा मत है तथा शेष सब काल मत में है। वह बताता हूँ। इसका मुझे कैसे विश्वास हुआ? केवल इस एक विचार से कि मैं किसी के अन्तर नहीं जाता। मैंने संसार से अपने-आप को सन्त मत गुरु के रूप में प्रगट किया है। मैं कहता हूँ कि मैं सतगुरु हूँ। सतगुरु

किसे कहते हैं? जो सच्चा ज्ञान देवें। सतगुरू सत्य ज्ञान का ही नाम है। दाता दयाल जी महाराज ने मुझ पर अत्यन्त दया की। उन्होंने मुझ अज्ञानी को पोसा तथा आश्रय दिया। उन्होंने मेरी अज्ञान की बातों में हाँ में हाँ मिला कर मेरी दीन और दुनिया बनाई। मेरा स्वार्थ व परमार्थ बनाया। उन्होंने मेरे गृहस्थ में तथा मेरी सभी कठिनाइयों में मेरी अत्यन्त सहायता की। वह मुझे ठीक सम्पत्ति तथा ठीक युक्ति बताया करते थे। मैं उनके उपकार को भूल ही नहीं सकता।

गुरु हुये संसार में परगट, गुरु से ज्ञान लो।
छोड़ दो पाखण्ड को, गुरु मत की महिमा जान लो॥

मैं कहता हूँ कि मैं सन्त सतगुरू हूँ और मुझ से वह ज्ञान लो जिसका संसार को पता नहीं है। दाता दयाल जी महाराज ने मुझे आदेश दिया था कि फकीर! समय के परिवर्तन के कारण धर्म व समाज में भी परिवर्तन आ जायेंगे अत: चोला छोड़ने से पूर्व शिक्षा को बदल जाना तथा सत्यता वर्णन कर जाना। जब से मुझे यह ज्ञात हुआ कि लोगों के अन्तर मेरा रूप प्रकट होता है। किसी को पुत्र दे जाता है। किसी के पर्चे हल करा जाता है। किसी को मरते समय ले जाता है इत्यादि-इत्यादि और मैं नहीं होता तथा न ही इन घटनाओं का मुझे कोई ज्ञान ही होता है। फिर वह कौन होता है? ऐ मानव! वह तुम्हारा अपना ही मन है, तुम्हारी अपनी ही आत्मा है, वह तुम्हारा अपना ही विश्वास है और तुम्हारा अपना ही भाव है। कोई गुरु, देवी-देवता अथवा राम-कृष्ण बाहर से तुम्हारे अन्तर नहीं आता। तुम भ्रम में हो और इसी भ्रम के कारण लूटे जा रहे हो। यह है यथार्थ ज्ञान जो मैं संसार को देना चाहता हूँ। हम गृहस्थी लोग मन के चक्कर में आकर लुट गए इन धर्मों पन्थों तथा गुरुओं ने बात को गुप्त रख कर जन समुदाय को पागल बनाया है और खूब लूटा है। वास्तविकता वर्णन

करने के लिए मैं संसार में सन्त सद्गुरु का रूप धारण कर के प्रकट हुआ हूँ। मैं चाहता हूँ कि ऐ मानव! तुझे जो कुछ प्राप्त होता है वह तेरे कर्म, तेरी श्रद्धा, तेरे विश्वास तथा तेरी नीयत (भाव) का फल ही मिलता है।

आप लोग आए हैं। आपने मेरी पूजा की मुझे हार चढ़ाए, वस्त्र दिए और रुपये दिए। यदि रुपये देने से किसी को यह भेद मिल जाये तो यह ज्ञान धनवानों की सम्पत्ति बन जाये। नि:सन्देह यह सेवा, पूजा तथा दान इत्यादि सांसारिक व्यवहार है। इस व्यवहार से तुम को वह वस्तु नहीं मिल सकती जिसको तुम्हारी आत्मा चाहती है। ज्योति जलाकर आरती करना तो एक रीति है। इससे शान्ति नहीं प्राप्त हो सकती, हाँ मनानन्द प्राप्त होता है। गुरु की सेवा क्या है?

दर्शन करे वचन पुन सुने सुन सुन कर फिर मन में गुने॥
गुन गुन काढ़ लेय तिस सार, काढ़ सार तिस करे आहारा।
कर आहार पुष्ट हुआ भाई, जग भव भय सब गई गवाई॥

गुरु के दर्शन करके उनके वचन सुनो, उनको गुनो उन पर चलो तब तुम्हारा कल्याण होगा। मुझे रुपये देने से, वस्त्र देने से एवम् हार पहनाने से तुमको वह स्थान निर्वाण, अभय पद अथवा मोक्ष नहीं मिलेगा। हाँ प्रेम करने से तुमको प्रेम व हर्ष प्राप्त होगा परन्तु सार वस्तु गुरु की वाणी को समझ कर तथा उस पर चलने से प्राप्त होगी मुझे वाणी की समझ नहीं आती थी। मैं तो दाता दयाल जी महाराज की देह के साथ लिपटा हुआ था जैसे धन्ने भक्त ने मूर्ति को ही भगवान् समझ रखा था। मुझ में रिद्धि-सिद्धि भी आ गई और मैंने मन के आनन्द भी बहुत लिए परन्तु वह वस्तु न मिल सकी।

भक्त गुरु को पूजा में वह वस्तु देता है जो उसको सबसे प्यारी होती है। जैसे भीलिनी ने प्रेम से बेर चख कर रामचन्द्र के लिए रखे

थे। ऐसे ही ऐ सतगुरु स्वरूप सतसंगियों! मैं आप को वह वस्तु भेंट करता हूँ जो मुझ को (86) छियासी वर्ष के पश्चात् मिली है तथा मुझे अत्यन्त प्रिय है परन्तु आपको उसकी आवश्यकता ही नहीं आप उसके अधिकारी भी नहीं। मुझे क्या प्राप्त हुआ? कबीर साहब का शब्द सुनो–

बारी जाऊँ मैं सतगुरु के मेरा किया भरम सब दूर॥

हजूर दाता दयाल जी महाराज ने मुझे प्रोत्साहन दिया। प्रेम दिया, संस्कार दिया तथा नाम दिया। भ्रम किसने दूर किया? यह सब उनकी ही दया है। उन्होंने मुझ से खेल खिलाया। एक शब्द में वह मुझे लिखते हैं–

खेल खेलाऊँ सुगम सुहेला, सुरत शब्द मत गाऊँ।
काल हिंडोले से तू बाचे, विधि विचित्र समझाऊँ॥
कर सत संग विवेक से गुरु का, गुरुदयाल हितकारी।
साधू बन के साध ले युक्ति, जा झूले के पारी॥
नर शरीर सूर दुर्लभ पाया, सत संगत में आया।
तेरा दाँव पड़ा है पूरा, सोच समझ तज माया॥
सबके चूके मौजन ऐसी, त्याग काल की आसा।
आज का साधन आज ही कर ले, कल को होगा उदासा॥
राधा स्वामी दया के सागर, तेरे कारण आये।
सीस चरन में उनके झुका कर, अपना काज बनाये॥

उस समय मुझे यथार्थ ज्ञान नहीं हुआ था। मैं तो उनके प्रेम में ही मस्त था। प्रेम में मैंने क्या कुछ नहीं किया। परन्तु यह बात समझ में नहीं आती थी कि संतों का मार्ग कैसे ऊँचा है। जो कुछ भी तुम्हारे अन्तर भाव विचार रूप रंग तथा कल्पनायें पैदा होती हैं अथवा जो

कुछ भी तुम्हारे अन्तर प्रकट होता है वह माया है नहीं, सब बाह्य प्रभाव है और वही फुरते हैं– External Effects (बाह्य प्रभाव) है। इसका परिणाम यह हुआ कि कोई हिन्दू बन गया, कोई मुसलमान बन गया, कोई राधा स्वामी बन गया, कोई कबीर पन्थी और कोई नानक पन्थी बन गया। कोई किसी का चेला बन गया तथा कोई किसी का चेला बन गया तथा कोई किसी का शिष्य बन गया। आपस में घृणा (द्वेष बुद्धि) उत्पन्न हो गई और झगड़े प्रारम्भ हो गए।

यह समझ मुझे मिली। पहले मेरे अन्तर जो वस्तु उत्पन्न होती थी मैं भी उस को सत्य समझता था। आज तुम लोग भी अपने अन्तर कोई सूरज देखता है कोई चाँद देखता है। कोई नक्षत्र देखता है और आनन्द में नाचने लग जाता है। ऐसे ही किसी ने अपने अन्तर में राम को देखा वह राम का भक्त बन गया। किसी ने कृष्ण को देखा, वह कृष्ण का भक्त बन गया, किसी ने देवी को देखा वह देवी का भक्त बन गया। इसमें कुछ सन्देह नहीं कि इस से तुम्हारा सांसारिक जीवन श्रेष्ठ हो जायेगा। परन्तु बहुधा सांसारिक जीवन बिगड़ भी जाता है। वह सब भ्रम है और कल्पना मात्र है। मेरे तो अब भ्रम चले गए। सम्भव है कि मैंने जो कछ समझा है वह ठीक न हो, मुझे कोई दावा नहीं। हजूर दाता दयाल जी महाराज ने मुझे आज्ञा दी थी कि चोला छोड़ने से पहले शिक्षा में परिवर्तन कर जाना। मैंने जो अनुभव किया वह कहा–

जो कुछ किसी को मिलता है, वह उसके अपने ही संकल्प का परिणाम है। आप किसी को विचार दो यदि उसका वह विचार (भाव) दृढ़ हो जाए तो क्योंकि यह मनोमय और मायामय जगत है अत: वह व्यक्ति अपने भाव की दृढ़ता के अनुसार वैसा ही बन जाएगा। मुझे इस माया की समझ नहीं आती थी। दाता दयाल जी महाराज ने मेरे नाम लिख दिया कि '**सोच समझ तज माया।**' माया

मुझ से तजी नहीं जाती थी। अब आप लोगों के अन्तर मेरा रूप प्रकट होता है तथा आपके अन्तर कितने अद्‌भुत खेल होते हैं। यह सब क्या है? माया। अत: मैं जब अपने आप को सन्तसद्‌गुरु भक्त कहता हूँ तो मैं बिल्कुल सत्य कहता हूँ, मैं सहकारी नहीं हूँ। सरसों हेड़ी वालो! तुम लोगों के अन्तर मेरे रूप द्वारा कितने खेल हुए। क्या मैं गया था। कदापि नहीं। यह सब तुम्हारे अपने ही मन का विश्वास था। कितना समय हो गया तुम लोगों के मेरे सम्पर्क में आए हुए, अब आगे बढ़ो और असलियत को समझो तथा अपने जन्म बनाओ।

यह मेघराज बैठा हुआ है, इस ने एक भैंस मोल ली। थोड़े दिनों के पश्चात् उसने दूध देना बन्द कर दिया। इसकी धर्मपत्नी कहती है कि बाबा जी! आप को स्मरण किया, आप आ गए और भैंस पर हाथ फेरा और कहा कि दूध निकाल लो। हमने दूध निकाल लिया तथा आगे के लिए भैंस ने दूध देना प्रारम्भ कर दिया। अब मुझे तो ज्ञात नहीं और न ही मैं गया, यह सब इन का विश्वास ही है। ऐसी घटनाओं को गुप्त रख कर, इन धार्मिक नेताओं ने इन गुरुओं ने तथा डेरे वालों ने अपनी पूजा करवाई है और लोगों से धन इकट्ठा किया है तथा किया जा रहा है। यह सब तुम्हारा अपना ही विश्वास है।

संसार के लोग अज्ञानता में पूजा करते हैं। जो लोग अपने निज घर नहीं जाना चाहते और सांसारिक जीवन को सुख से व्यतीत करना चाहते हैं, उन को उचित है कि एक स्थान पर विश्वास रखें और एक को माने, चाहे राम को माने, चाहे कृष्ण को माने, चाहे किसी भी देवी-देवता पर विश्वास करे, चाहे गुरू पर ही विश्वास करें परन्तु एक को मानें। हिन्दू अनेक वादी हो गए।आज राम को स्मरण किया तो कल कृष्ण को स्मरण किया। परसों देवी की पूजा की तथा अगले दिन देवता की शरण में चले गये। धोबी का कुत्ता न घर का न घाट

का। एक को ही मानो व एक पर ही विश्वास करो तथा एक के ही हो के रहो तब तुम को लाभ होगा अन्यथा नहीं। एक इष्ट पर विश्वास न रखने से मन स्थिर नहीं होता।

आज गुरू पूर्णिमा के दिन आप लोगों का उपकार मानता हूँ तथा उस वस्तु से आप लोगों की सेवा करना चाहता हूँ जो मुझे अत्यन्त प्रिय है तथा सारे जीवन की दौड़धूप के पश्चात् मुझे प्राप्त हुई है। मेरे पास धन नहीं है जो आप लोगों को दूँ। मेरे पास वह मोती है, वह गूढ़ रहस्य तथा ज्ञान है, जिस को किसी ने भी प्राप्त नहीं किया। पूर्व काल में गुरू लोग यह भेद किसी किसी शिष्य को बताते थे और उसको भी यह कह देते थे कि वह इसे किसी को न बताए, जैसे कबीर साहब ने धर्मदास जी से कहा था–

धर्मदास तोहि लाख दोहाई, सार भेद बाहर नहिं जाई।

जिस की तुम पूजा करते हो, वह तो तुम्हारा अपना ही मन है और तुम्हारा अपना ही विश्वास है। मेरा रूप धारण करके तुम्हारी सहायता कर जाता है। स्वामी जी महाराज ने अपनी वाणी में लिखा है कि–

काल ने अपनी पूजा आप कराई।

काल तुम्हारा अपना ही मन है। अत: प्रत्येक व्यक्ति अपने ही मन की पूजा करता है। ऐ मुझे गुरू मानने वालो! मैं तुम पर बलिहारी जाता हूँ। आप लोगों के कारण मुझे ज्ञान हुआ कि मेरे मन के अन्तर जितने भाव-विचार, संकल्प और रंगरूप प्रगट होते है, यह सब कल्पित हैं और माया है। इस ज्ञान से मुझे मन तथा माया के रूप का ज्ञान हुआ और मैं इस से आगे जाने के लिए विवश हुआ।

क्योंकि यह मनोमय तथा मायामय संसार है। अत: यदि तुम इस संसार में सुखी रहना चाहते हो तो अपने संकल्प को अच्छा (श्रेष्ठ)

बनाओ इस माया रूपी संसार में माया ही तुम्हारी सहायक है। माया क्या है तुम्हारी बुद्धि। मैं तुम सज्जनों को यह वस्तु देना चाहता हूँ, जिस को मैंने सारा जीवन खो देने के पश्चात् प्राप्त किया है। परन्तु हीरे का महत्व जौहरी जानता है, अनाड़ी नहीं जान सकता। मेरा क्योंकि यह कर्म भोग था, अत: मैंने गूढ़ भेद को खोल दिया। बाहर से कोई शक्ति तुम्हारे अन्तर आकर प्रकट नहीं होती। यह सब बाह्य प्रभाव है। तुम्हारा संकल्प ही काम करता है अत: मैं **''शिवसंकल्प-मस्तु''** अर्थात् वेद मार्ग का मानने वाला हूँ। शुभ संकल्प तथा अच्छा आचार और व्यवहार रखो जिस से तुम्हारा संसार सुखमय बन जाये परन्तु इस में फँसों नहीं। अनासक्त रहो।

बलिहारी जाऊँ सतसंगियो!

तुम्हारी दया से मेरा भरम हुआ दूर।

मैं जानता हूँ इस स्पष्ट वर्णन से, मेरा केन्द्र नहीं बन सकता। यदि परदा रखता तो लाखों क्या, करोड़ों रूपये इकट्ठे कर लेता। परन्तु मेरी आत्मा ने मुझे आज्ञा नहीं दी। अत: मैं कहता हूँ कि जिन महात्माओं ने परदा रख कर झूठा मान लिया और लोगों को अज्ञान में रख कर उन से धन लिया, यदि कर्म का विद्यान ठीक है अर्थात् यदि कर्म का फल मिलता है तो इन को अवश्य ही फल मिलेगा। परन्तु मुझे पता नहीं कि फल प्राप्त होता है अथवा नहीं। गुरू की आज्ञा पालन करने के लिए मैंने अपयश भी लिया तथा कष्ट भी सहे है–

बारी जाऊँ मैं सतगुरू के। मेरा किया भरम सब दूर।
चन्द चढ़िया कुल आलम देखे, मैं देखूँ भरम दूर॥

भ्रम चले जाने के पश्चात् व्यक्ति को प्रसन्नता मिलती है। परन्तु तुम लोग यह प्रसन्नता नहीं ले सकते। तुम को इसकी आवश्यकता ही

नहीं क्योंकि तुम तो माया के चक्र में हो अत: सन्त मत की शिक्षा प्रत्येक व्यक्ति के लिए नहीं है। सर्वसाधारण के लिए यह है कि एक आस और एक विश्वास रखो। संसार में विश्वास के अतिरिक्त और कुछ नहीं।

मध्य प्रदेश में एक गुरु था, उसका आचरण बहुत निकृष्ट था। एक व्यक्ति को उस पर बहुत विश्वास था और विश्वास के कारण उस में रिद्धी-सिद्धी आ गई। उस गुरू ने उस चेले की स्त्री पर भी हाथ डाला। स्त्री ने अपने पति से शिकायत की परन्तु पति ने उल्टा अपनी पत्नी को डाँटा कि तू मेरे गुरूदेव की निन्दा कर रही है तथा झूठ बोलती है किन्तु जब स्त्री ने अपने पतिदेव को उसके गुरू महाराज के दोष प्रत्यक्ष दिखा दिए तो उसको विश्वास हो गया तथा उसका कपटी गुरू से विश्वास उठ गया। विश्वास के टूटते ही उसकी रिद्धी-सिद्धी भी जाती रही। अत: समस्त खेल तुम्हारे विश्वास का ही है। जैसे-जैसे संस्कार व्यक्ति को मिले हुए होते हैं, उन्हीं के अनुसार कल्पनायें उत्पन्न होती है। पीर, पैगम्बर, बली,, औलिया, ऋषी, मुनि तथा समस्त संसार इसी चक्र में आ गया। जो भी किसी का पुजारी है वह अपने ही मन का पुजारी है। क्या तुमने यह मेरी पूजा की है? यह तुमने अपने ही मन की पूजा की है तथा अपने ही मन से तुमने आनन्द लिया है। परन्तु यह ऊँची बात प्रत्येक व्यक्ति की समझ में नहीं आती। मैं यदि सच्चाई वर्णन नहीं करता तो मैं दोषी हूँ। मैं तो खुल्लम-खुल्ला कहता हूँ कि मैं कहीं नहीं जाता और यह शत-प्रतिशत सच्चाई है। चूँकि मैं सत्य ज्ञान देता हूँ अत: मैं सन्त सद्गुरू हूँ। आप लोगों को लोक तथा परलोक का ज्ञान दिये जाता हूँ।

यह बिहारी लाल पाठक है मैं इस को गुरू मानता हूँ। क्योंकि सन् 1942 ई. में यह नंगे पाँव राय-बरेली से मेरे पास आया। तीन सौ

रुपये, एक दरी, फल और फूल लाया। अपनी स्त्री की एक चिट्ठी लाया। उसमें उसने लिखा था कि मेरे अभ्यास के समय मेरे अन्तर स्वामी जी महाराज, राय सालिगराम जी महाराज, बाबा सावनसिंह जी महाराज, दाता दयाल जी महाराज तथा (आप परम दयाल पण्डित फकीरचन्द जी महाराज) आए। उन्होंने कहा कि समय के सद्गुरू बाबा दयाल पण्डित फकीरचन्द जी है, तुम उनके पास जाओ।

अब आप सोचो मैं ब्राह्मण हूँ तथा फकीर हूँ। मैं सोचने के लिए विवश हूँ। यदि वह अपने पत्र में मेरा नाम न लिखती तो मैं यह समझ लेता कि सम्भव है अन्य सन्त जन जिन का नाम लिखा है, वह गये होंगे। पर वह कहती है कि आप भी उनके साथ थे किन्तु मैं तो गया नहीं। अब जब मैं नहीं गया तो मैं कैसे मान लूँ कि वह सन्त जन भी गए। सारा संसार इस चक्र में है। सन्तों का मार्ग माया से निकालने का है। पर तुम लोग अभी इसके अधिकारी नहीं हो। अत: माया में रहते हुए अपनी माया को ठीक रखो। **'शिवसंकल्पमस्तु'** के विधान पर चलो। तुम्हारा यह लोक सुधर जायेगा। किन्तु जब तक तुम माया के रूप को नहीं समझोगे, चाहे तुम किसी की भी भक्ति करो, तुम माया के चक्र से नहीं निकल सकोगे, और न ही तुम्हारा परलोक बन सकेगा।

हुआ प्रकाश आस गई दूजी उगिया निर्मल नूर।

क्योंकि मैं मालिक को मिलने निकला था, तो आप लोगों की दया से मैं, समस्त रूप रंग, भाव, विचार, कल्पनायें जो मेरे अन्तर उत्पन्न होती थी तथा मैं उनको सत्य मान कर उनमें फँसा हुआ था, उनमें से निकल गया आगे है प्रकाश। शास्त्र भी प्रकाश का विचार देते हैं, पर जब तक मन के संकल्प बन्द नहीं होते, तुम प्रकाश में जा नहीं सकते और यदि बलपूर्वक चले भी जाओगे, तो तुम वहाँ ठहर नहीं सकते।

मैं प्रकाश में जाता रहता हूँ। वही ब्रह्म है, वही पार ब्रह्म है। सनातन धर्मावलम्बियों को सनातन धर्म की समझ नहीं है। वह तो पुस्तकों में फँसे हुए हैं। असलियत को नहीं समझते। जिसका प्रकाश खुल जाता है। उसको ज्ञान हो जाता है कि मैं आत्मस्वरूप हूँ। फिर वह किसी के आगे झुकता नहीं है। यदि आज मुझे राधास्वामी मत सच्चा सिद्ध न होता तो मैं इसका खंडन कर जाता। राय सालिगराम जी महाराज जिन्होंने अपने गुरु स्वामी जी महाराज की इतनी सेवा की है कि जिस का और कोई उदाहरण नहीं मिलता तथा जिन्होंने राधास्वामी मत चलाया। वह लिखते हैं कि सतगुरू केवल शब्द स्वरूपी राधास्वामी दयाल हैं और उनके चरण प्रकाश है। जब प्रकाश तथा शब्द आ जाता है तो फिर बाहर के गुरू का उपकार शेष रह जाता है। बाहर के गुरू का कर्त्तव्य है कि अपने शिष्य को प्रकाश तथा शब्द तक पहुँचा दे।

कामी तरे क्रोधी तरे, पापी तरे अनन्त।
आन उपासक कृत घन, तरे न नाम रटन्त॥

मैं दाता दयाल जी महाराज का तथा आप लोगों का आभारी हूँ।

माया मोह तिमिर सब नाशा, पाया हाल हुजूर।

आप लोगों ने जब मुझे बताया कि मेरा रूप आप के अन्तर प्रकट होता है और मैं नहीं होता तो मुझे यह समझ आ गई कि मेरे भी अन्तर जो कुछ प्रकट होता है यह सब कल्पित है। तो मैं आगे जाने के लिए विवश हो गया। आगे है प्रकाश और शब्द तथा वही हमारी आत्मा है। आज तुम लोगों ने मेरी पूजा की और पैसे दिए किन्तु पैसे देने से यदि कोई यह समझे कि उसको गूढ़ रहस्य अथवा यथार्थ ज्ञान प्राप्त हो जायेगा तो यह पूर्णतय: असम्भव है। पैसे देना तो सांसारिक व्यवहार है।

पहले दाता शिष भया, जिन तन मन अरपा सीस।
पीछे दाता गुरु भया, जिन नाम दिया बख्शीस॥

राजा जनक ने तन और मन दिया था। उसको ज्ञान नहीं होता था। बहुत महात्मा उस को ज्ञान देने आये किन्तु राजा जनक की सन्तुष्टि नहीं हुई। फिर अष्टावक्र जी आए और कहने लगे, राजन! सेंत मेंत में कोई वस्तु बिना मूल्य नहीं मिला करती, पहले भेंट लाओ। राजा ने कहा क्या भेंट दूँ महाराज?

अष्टावक्र ने कहा कि अपना राजपाट दे दो। राजा जनक ने अपना सिंहासन छोड़ दिया। ऋषि ने कहा कि अपना शरीर भी अर्पण करो। राजा जनक ने सोचा कि यदि मैंने शरीर दे दिया तो फिर तो मैं कोई गति नहीं कर सकता। मैं शरीर को हिला-डुला नहीं सकता। कहने लगा कि अच्छा शरीर भी आप को अर्पित है। ऋषी ने पुनः कहा कि अब अपना मन भी दे दो। राजा ने सोचा कि मन देने से तो मैं कुछ सोच भी नहीं सकूँगा, परन्तु चूँकि वह सच्चा खोजी था तथा उसमें त्याग करने की शक्ति थी अतः विनीत भाव से कहा कि महाराज! मन भी आप के समर्पण है। अब शेष जो रह गया वही आत्म-स्वरूप है। तत्काल महाराज जनक को ज्ञानोदय हो गया।

जब तुम लोग अपने हाथों से मेरे शरीर को दबाते हो तो तुमने अपना शरीर मुझे कैसे दिया? यह मार्ग महाकठिन है। वाणी पढ़ के मैं कई बार रोया करता था कि मैं कहाँ फँस गया। उस समय मैंने प्रण किया था कि अपना अनुभव कह जाऊँगा।

विषय विकार लार है जेता जार किया सब घूर।
पिया पियाला सुधबुध विसरी, हो गया चकनाचूर॥

अभ्यास करते-करते जब मानव वहाँ पहुँच जाता है तो सब कुछ भूल जाता है।

हुआ अमर मेरे नहिं कबहूँ, पाया जीवन मूर।

आत्मा तो पहले ही अमर है, पर इसका विश्वास सतसंग में जा के, गुरू के वचनों द्वारा आता है। तथा तन और मन को छोड़ कर

साधन करने से यह पता लगता है कि मैं कौन हूँ? शरीर मन तथा मन के अन्तर जो रंग रूप आते है। वह अजर-अमर नहीं है। अजर और अमर तुम स्वयं हो तथा साक्षी हो। मुझ पर तो गुरू ने दया कर दी तथा मैं सीमा को छोड़ निस्सीम स्थल में चला गया हमारे अन्तर हमारी चैतन्य शक्ति **''मैपने''** में आकर सीमित रहती है। जब मस्तिष्क के अन्तर कोई भी कल्पना शेष नहीं रहती तो उस अवस्था का नाम असीम दशा वह असीमावस्था सर्वव्यापी है। यह साधन का विषय है।

मैंने जीवन भर साधन अभ्यास करने से तथा आप लोगों की दया से जो कुछ प्राप्त किया, आज गुरू पूर्णिमा पर आप लोगों को बड़े प्रेम से भेंट करता हूँ। रामायण में आता है कि-

शिव द्रोही मम दास कहावे, सोनर सपनेहुँ मोंहि न भावे।

शिव जी की पूजा होती है। लोग तो शिव जी की पिण्डी बना कर उस पर फल, फूल, जल तथा विल्वपत्र चढ़ाते हैं। यह तो एक रीति है। शिवजी की पूजा क्या है? शिवजी की रहनी को देखो, उनके गले में सर्प है। गणेश जी का वाहन चूहा है। पार्वती की सवारी शेर है तथा शिव जी का वाहन बैल है। शिव जी के दरबार में सभी मिल कर रहते हैं। न सर्प चूहे को निगलता है तथा न शेर बैल ही को मारता है। सभी आपस में प्रेम भाव से रहते हैं। उन में एक दूसरे के प्रति कोई बैर, द्वेष और ईर्ष्या नहीं है। इसी विधि से संसार में रहना शिव जी की वास्तविक पूजा है।

लोग कहते हैं कि शिव जी ने कंठ में विष रख लिया है, विष को पेट में नहीं जाने दिया। क्या अभिप्राय है? कि बुरी बातों को अपने पेट में अर्थात् अपने अन्तर, अपने मस्तिष्क में मत आने दो अन्यथा वही विष तुम्हें नष्ट कर देगा। यह है शिव जी पूजा। जब तक मानव शिव जी का पुजारी नहीं बनेगा। यह राम को नहीं मिल सकता। जो व्यक्ति शिव जी की यह पूजा करेगा, जो ऊपर बतलाई गई है, वह जीवन में

सुखी रहेगा। यह मूर्ति पूजा तो बच्चों का कार्य है। इसके भाव को समझो। परन्तु यह पूजा कौन बतायेगा? पूर्ण गुरू। गुरू भेद देता है। मूर्ति स्थापना भी भी गुरू ही कराता है। श्री रामचन्द्र जी ने लंका पर चढ़ाई करने के लिए सिन्धु पर पुल निर्माण किया तथा रावण ही को बुला कर उस से पूजा करवाई।

शास्त्र कहते हैं कि विष्णु नाभी में रहते हैं। गणेश जी गुदा में तथा ब्रह्मा इन्द्री में रहता है। यह सह अलङ्कार मात्र है। विष्णु की पूजा अपनी पाचन शक्ति को ठीक रखना। यदि तुम्हारा शरीर स्वस्थ है तो तुम सुखी हो अन्यथा दु:खी हो। यदि विष्णु रुष्ट है अर्थात् तुम्हारी पाचन शक्ति बिगड़ी है या ठीक नहीं तो तुम को दु:ख होगा। मैं सनातन धर्म के रहस्य को जानता हूँ। परन्तु लकीर का फकीर नहीं हूँ। यदि जिह्वा के स्वाद के लिए अधिक खा जाओगे तो पेट ठीक न रहेगा, फिर स्वप्न दोष प्रारम्भ होंगे तथा प्रमेह रोग में ग्रसित हो जाओगे स्त्रियों को लिक्योरिया हो जाएगा। इस से और भी रोग प्रारम्भ हो जायेंगे। स्वास्थ्यर्ि बगड़अ ाएगा।अ त:ि वष्णुक ाभ क्तव हीह ैज ोअ पने स्वास्थ्य को ठीक रखो।

ब्रह्मा की पूजा क्या है? ब्रह्मा संकल्प से इस सृष्टि को उत्पन्न करता है। तुम भी अपनी कल्पना से ही अपना संसार रच लेते हो, जैसी तुम्हारी कल्पना होगी वैसी ही तुम्हारी दशा भी होगी। अत: अपने विचारों को ठीक रखो जिस से तुम्हारा सांसारिक जीवन ठीक रहे। कोई कहता है कि ऐसा क्यों है? लोगों को समझ नहीं है और न ही इन को कोई सच्ची बात बताता है। जब बच्चा माता के गर्भ में होता है तो उस समय माता के जो विचार होंगे वही बच्चे पर प्रभावित होंगे। यदि गर्भ काल में भी माता कामातुर होती है तथा पति-पत्नी विषय भोग करते हैं, तो बच्चे में भी वही संस्कार जायेंगे। इस को कोई भी

रोक नहीं सकता। दूसरी बात यह है कि आज कल घरेलू झगड़े बहुत हैं। स्त्री के मन में घरेलू क्लेश के कारण प्रत्येक समय घृणा तथा द्वेष के विचार चक्कर लगाते हैं जिस के कारण वह हर समय क्रोध में रहती है। उस के यही विचार बच्चे पर प्रभाव करेंगे। अत: इन बुरे संस्कारों का बच्चों में आना स्वाभाविक है। मैं बच्चों को कदापि दोषी नहीं ठहराता। वास्तविक दोषी माता-पिता ही हैं। यदि राम जैसा बालक उत्पन्न करना चाहते हो तो तुम पहले महाराजा दशरथ तथा महारानी कौशल्या जैसे बनो यह सिद्धान्त की बात है। यदि तुम अपने जीवन को सुखपूर्वक व्यतीत चाहते हो तो अपने विचारों को ठीक रखो।

गुरू ब्रह्मा, गुरू विष्णु:, गुरू देव महेश्वर:।
गुरू साक्षात् परब्रह्म, तस्मै आ गुरूवे नम:॥

कई बार अपने हृदय में सोचता हूँ कि फकीर! तुम ने यह क्या मकड़ी का जाला बना रखा है? लोग आते हैं तथा तुम्हारी प्रतिष्ठा करते हैं। तुम यह झूठी मान-प्रतिष्ठा करते हैं। तुम यह झूठी मान प्रतिष्ठा ले कर कहाँ जाओगे? मैंने मकड़ी का जाला नहीं तना, मेरे सिर पर गुरू ऋण था। मेरा ही कर्म कटाने के लिए मौज ने स्वयं ही प्रबन्ध किया है। यह प्रेम का मार्ग है। यदि प्रेम नहीं करोगे तो तुम को कुछ नहीं प्राप्त होगा। प्रकृति का यह विधान है कि तुम जो कुछ दोगे वही तुम को भी मिलेगा। धन दोगे तो धन मिलेगा। प्रतिष्ठा देने से तुम्हें भी प्रतिष्ठा ही मिलेगी। घृणा के व्यवहार से घृणा ही पाओगे तथा यदि गाली दोगे तो उलट कर गाली ही मिलेगी।

मैंने सद्गुरू की Duty (कर्त्तव्य) पूरी कर दी। सत्यज्ञान दिये जा रहा हूँ। अब रहा यह प्रश्न कि क्या मैं किसी की सहायता कर सकता हूँ? लोग कहते हैं कि बाबा जी! दया कर दो। पहली दया तो यह है

कि मैं ऐसा ज्ञान देता हूँ जिससे तुम्हारी बुद्धि निश्चल हो जाये तथा जो कुछ मैं कहता हूँ उसका तुम को बोध तथा विश्वास हो जाये। परन्तु यह एक दिन का कार्य नहीं है, पर्याप्त सतसंग और अभ्यास के पश्चात् यह दृढ़ विश्वास होता है। अब रह गया किसी का कोई Private निजी काम। सोचता हूँ कि क्या मेरे विचार देने से किसी का भला हो सकता है? हाँ– क्यों? जब तुम लोग अपने संकल्प से ही मेरा रूप बना कर उससे काम ले लेते हो तो सिद्ध हुआ कि मानव के मन में बड़ी ही शक्ति है। यदि कोई महात्मा सच्चे हृदय से किसी का भला चाहे तो उसका भला भी हो सकता है। इसका नाम आशीर्वाद है तथा यदि बुरा चाहे तो उसी का नाम श्राप है। यह आवश्यक नहीं है कि तुम केवल आशीर्वाद ही के लिए गुरू के पास जाओ। गुरू की संगत से गुरू के वचनों से तुम्हारे जीवन की गढ़त होती है, हाँ यदि उसके वचनों पर आचरण करो।

यह मनोमय जगत है यदि तुम निष्काम भाव से किसी दुखिये की सहायता करोगे तो उसके हृदय से तुम्हारे लिए आप ही आप शुभ भावना निकलेगी तथा वह शुभ भावना तुम्हारी सहायता करेगी। और यदि तुम अकारण ही किसी निर्दोष को सताओगे तो उसके हृदय से जो आह निकलेगी वह तुम को खा जाएगी। अत: समझ और बूझ से जीवन व्यतीत करो। यदि सच्चे भाव के साथ कोई मेरे पास आता है तो मैं भी उसको शुभ भावना देता हूँ। बहुत से व्यक्ति दिखावे के भक्त भी होते हैं। कुछ महानुभावों के सन्तान नहीं होती, ज्योतिषी लोग उनको बताते हैं कि आप पर पितरों का कोप है। पितृ कौन क्या है? तुम्हारे माता–पिता ने तुम को पाला जवान बनाया। ब्याह किया। परन्तु तुमने उनके बुढ़ापे में उनकी सेवा नहीं की। तो उनके मुख से या उनके हृदय से जो आह निकलेगी, वह तुम को इस जन्म में अथवा अगले जन्म में

सन्तानहीन बना देगी। मेरे पास एक सेठ तथा उसकी स्त्री आये, उनके संतान नहीं थी। मैंने सेठ से पूछा तुम्हारे माता–पिता हैं। उसने कहा कि पिता जी तो पूरे हो गए हैं, परन्तु माता है। स्त्री ने कहा कि महाराज! सास मेरे साथ अनायास झगड़ा करती रहती है। मैंने स्त्री से कहा कि वह चाहे तुम को गालियाँ दे और कुछ भी कहे। परन्तु तुम तन और मन से उसकी सेवा करो। तुम्हारे बच्चा हो जाएगा। तीन वर्ष पश्चात् उसके लड़का हो गया।

घर में प्रेम रखो। बुरा मत सोचो। यह भी अपने वश की बात नहीं है। मेरे ही मन में कई ऐसे विचार आते हैं, जिन को मैं नहीं चाहता परन्तु वह आ जाते हैं। यह भी तो दाता दयाल जी महाराज का ख्याल संस्कार अथवा आशीर्वाद होता है, जो मुझ से यह काम करा रहा है। पर मैंने चेले नहीं बनाए, फिर भी मेरा काम चल रहा है। उनका आशीर्वाद ही मेरे साथ है। गुरू का काम शिष्य की बुद्धि को निश्चल बना देना है।

जब दया गुरु की हुई, चरणों की भक्ती मिल गई।
सब निर्बलता मिट गई, चरणों की शक्ति मिल गई॥
आ गये सतसंग में और सत संग का हो गया।
दुर्मती जाती रही, जब गुरू के मत का हो गया॥

दुर्मति है अज्ञान। जब सतसंग में आ के बात को समझ लिया और गुरु के चरणों अर्थात् प्रकाश में या अपने आत्मस्वरूप में चला गया तो उसकी निर्बलता स्वाभाविक ही समाप्त हो जाती है और भक्त बलवान हो जाता है। उसकी संकल्प शक्ति बढ़ जाती है और उसके काम होते रहते हैं। लोग गायत्री मन्त्र का पाठ करते हैं परन्तु असलियत को नहीं समझते। मैं प्राचीन सनातन धर्म को वापस ला रहा हूँ।

प्रेम का प्याला पिया, पीते ही मतवाला बना।
मन की सुधबुध खो गई, भोला बना भाला बना॥

पाँव में मस्तक नवाया, चित्त से धारा गुरु का रंग।
कीट जिसको पहले सब कहते थे, अब ठहरा भिरंग (भृङ्गी)॥

जिसका तुम ध्यान करोगे तुम भी वही हो जाओगे, जैसे कीट तथा भृङ्ग। अत: अपना इष्ट सदा ऊँचा ही रखो। गुरु नाम है ज्ञान का तथा अनुभव का। गुरू फकीरचन्द नहीं है। पर इसकी समझ शीघ्र नहीं आती।

आप में आप लिखा, आपे में आप ज्ञान था।
भर्म में लटका हुआ, भूला था और अज्ञान था॥

मैं भी अज्ञानी था और गुरू को बाहर ही खोजा करता था।

शब्द को सुनते ही अन्तर में जो वृत्ति छा गई।
छिन में पल में, वासना माया की सारी खो गई॥

शब्द अभ्यास अति आवश्यक है। मन के साधन से सुरत निरत नहीं होती। सुरत अर्थात् शब्द के सुनने से सूरत निरत होती है। जो कुछ मैंने अनुभव किया, वह कहा। तथा उसके प्रमाण में भी जो कुछ हो सका वह बताया। तुम में से कोई बाबा सावन सिंह जी महाराज को गुरू समझता है, कोई शिवा नन्द को गुरू समझता है और कोई मुझे गुरू मानता है। दाता दयाल जी महाराज का शब्द सुनो। इस से आप को असली तथा सच्चे सद्गुरू का पता लग जायेगा।

गुरू रूप न समझे कोय, भरम में पड़े अज्ञानी।
गुरू को मानुष जान कर भक्ति का करे व्यवहार।
सो प्राणी अति मूढ़ है, कैसे जाय भव पार॥
– देह के बने अभिमानी॥

गुरू को मानुा जान कर सीत प्रशादी लें।
सो तो पशु समान हैं, संशय में अटके॥
–गुरू तत्व न जानी॥

गुरू को मानुष जान कर मानुष करे विचार।
सो नर मूढ़ गंवार है, भूल रहे संसार॥
– मोह के फाँस फँसानी॥

गुरू को मानुष जान कर, भेड़ की चलते चाल।
वह बन्धन को क्यों तजे, व्यापै माया काल॥
– पड़े योनी की खानी॥

गुरू नाम आदर्श का, गुरू है मन का इष्ट।
इष्ट आर्दा को ना लखे, समझो उसे कनिष्ट॥
– बात बूझे मनमानी॥

गुरु भाव घट में रहे, अघट सुघट की खान।
जिसे समझ ऐसी नहीं, वह है मूढ़ महान॥
– नहीं गुरू रूप पिछानी॥

चेला तो चित में रहे, गुरू चित के आकाश।
अपने में दोनों लखे, वही गुरू का दास॥
– रहे गुरू पद घट ठानी॥

सुरत शिष्य गुरू शब्द है, शब्द गुरू का रूप।
शब्द गुरू की परख बिन, डूबे भर्म के कूप॥
– नर जन्म गंवानी॥

गुरू ज्ञान का तत्व है, गुरू ज्ञान का सार।
गुरू मत गुरू गम जो लखे, फिर नहीं भवभय भार॥
– कँवल जैसी गति आनी॥

राधा स्वामी सतगुरू संत ने कही बात समझाय।
जो नहिं माने वचन को, उरझ उरझाय॥
– कौन समझे यह बानी॥

सब को राधा स्वामी।

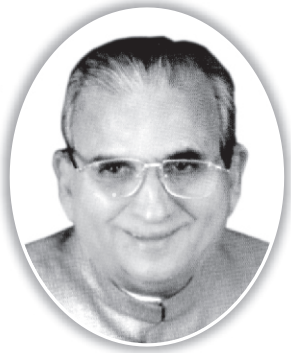

सत्संग

हजूर मानव दयाल जी महाराज

मानवता मंदिर, होशियारपुर।

दिनाँक 16 दिसम्बर, 1981

मस्तरामसतं देवं फकीरचन्द पण्डितम्।
परमसन्तं दयालु च नमामि जगद्गुरुम्॥

गुरुर्ब्रह्मा गुरुर्विष्णुः गुरुर्देवो महेश्वरः।
गुरुः साक्षात् परब्रह्म तस्मै श्रीगुरवे नमः॥

श्री मस्तराम जी के घर उत्पन्न हुए, साक्षात् देवताओं के भी देवता परमतत्त्व फकीर चन्द जी महाराज परमसन्त परम दयाल जो जगद्गुरु हैं उनके चरणों में मेरा नमस्कार। गुरु ही ब्रह्मा है, गुरु ही विष्णु है, गुरु ही परमेश्वर महादेव है और गुरु ही परमतत्त्व निधि है, ऐसे गुरु को नमस्कार है। परमतत्त्व की निशानी क्या होती है? वह यह होती है कि प्रत्येक व्यक्ति जो उनके साथ होता है वह कहता है कि वे मुझसे ही सब से अधिक प्रेम करते हैं कोई नहीं कहता कि मुझसे कम प्रेम करते हैं। यह परमतत्त्व व सच्चे गुरु की निशानी होती है। दूसरे उनके पास बैठते ही शान्ति की किरणे आयेंगी। तीसरे वह हमेशा खुश रहता है।

मेरे आदर्श परम दयाल जी के प्रिय सत्संगी भाई-बहिनो! उन्होंने मुझे सबसे पहिली यह आज्ञा दी थी कि तू पहिले खुद अपने-आप साधना करना। दूसरी गुरु की आज्ञा यह है कि बहुत सीधी-सादी भाषा में बोलना परन्तु पढ़ाता था न! मेरी आदत थी कि बड़ी उच्च कोटि के बड़े-बड़े शब्द बोलता था। क्योंकि वहाँ बड़े-2 लोगों में उनकी भाषा में बोलना आवश्यक होता है परन्तु वहाँ मैं कोशिश कर रहा हूँ कि सीधी-सादी भाषा में बात करूँ और गुरु को अपार कृपा की धारा से दिन-प्रतिदिन मुझ में एक नई आदत पड़ रही है कि मैं बहुत ही सरल शब्दों में आपसे बात करूँ।

अमरीका में पिता जी के पास जब मैं रहा, हंसराज जी घई यहाँ बैठे हैं, ये साक्षी है वह रात, घई साहब! ऐसी रात थी कि मुझे लगता है कि कई जन्म-जन्मान्तरों के बाद मैं उनके पास रहा। मैं कहता हूँ कि उस रात के लिए ही पिता जी वहाँ पधारे थे। उस रात को मैं बयान नहीं कर सकता। उन्होंने वहाँ शरीर छोड़ने का Plan आठ साल पहिले ही बना रखा था, यह मत समझिये कि यूँ ही वो चले गये थे। यह कैसे बताऊँ आपको?

डॉ. रामदेव राज जी के पिता राजेश्वर राव जी पिता जी से दीक्षित है और पिता जी के भक्त हैं। जब यह छोटा-सा बच्चा था उस समय से पिता जी के पास जाता था। यहाँ डाक्टरी पढ़ने के बाद पिता जी से अमरीका जाने की आज्ञा ली। जो डॉक्टर अमरीका जा करके Practice करना चाहे या नौकरी लेना चाहे उस डॉक्टर को वहाँ के कानून के अनुसार दो साल वहाँ ट्रेनिंग व शिक्षा लेनी पड़ती है, हस्पताल में रहना व सीखना पड़ता है। वहाँ पर हर एक विभाग के अलग-अलग विशेषज्ञ डॉक्टर होते हैं जिनको अपने-2 विभाग की विशेष जानकारी होती है कोई हृदय का डॉक्टर है कोई मस्तिष्क का डॉक्टर है, हर प्रकार के डॉक्टर है। रामदेव राव एक ऐसे डॉक्टर के

नीचे काम कर रहा व सीख रहा था जो हृदय की गति अर्थात् Heart का खास डॉक्टर था और जिस हस्पताल में सीखने गया उसका नाम है मर्सी हस्पताल। मर्सी का क्या मतलब है जानते हैं आप? मर्सी का अर्थ है दया है। क्या यह सब बातें ऐसे ही गई कि परम दयाल दया के हस्पताल में जायें, नाम भी दया हो उसका? आप सोचो, वह जो मर्सी हस्पताल है बहुत पुराना है और वह है भी एक धार्मिक हस्पताल, क्योंकि कैथेलिक लोगों ने चला रखा है। उसमें कैथोलिक माताएँ रहती हैं और जो मरीज़ होते हैं उनके लिए वे प्रार्थना भी करती हैं परन्तु वह हस्पताल चूँकि बहुत पुराना है उसमें बहुत पुराने-पुराने अच्छे-अच्छे महा अनुभवी डॉक्टर काम करते हैं। रामदेव को मालूम था कि दो साल मैं यहाँ जब सीख लूँगा तो यहाँ तो भई बड़े-2 धुरन्धर डाक्टर हैं, यहाँ तो कोई मुझ जैसे नये आदमी को लगा नहीं सकता,द स-बीसस ालउ सकाअ नुभवह ोत बत ोल गाये ाव ह कहता था कि जब उसके दो साल पूरे हो गये तो उसने पिता जी को चिट्ठी लिखी।

सुर, नर, मुनि सब की यह रीती कि स्वारथ वश करें प्रीती।

ठीक है, स्वार्थ के लिए भी लिखो यदि सन्त पूर्णपुरुष है आपके स्वार्थ को वह कभी रोक नहीं सकता, आपके स्वार्थ को भी देगा। उसने चिट्ठी में पिता जी को कहा कि महाराज मालिक, दो तीन शहर हैं जहाँ मैंने अर्जियाँ भेजदी हैं, यह बताओ कि इन तीन-चार जगहों में से कौन सी जगह मेरे लिए अच्छी होगी? उसने अर्ज़ियाँ दीं तो डाक्टर से जा करके कहा कि मेरे लिए सिफारिश लिखो, सिफारिश लिखवानी पड़ती है। उसने बड़े डॉक्टर से दो-तीन जगह सिफारिश की चिट्ठियाँ लिखवाई तो इतने में पिता जी ने एक लाईन में अंग्रेजी में उसको उत्तर दिया कि Stay where you are अर्थात् जहाँ पर तुम हो वहीं मर्सी हस्पताल में ही रहो। वह कहने लगा, चिट्ठी आई तो मैं

हैरान रह गया। मैंने दिल में कहा पिता जी यह क्या कर रहे हैं? क्या यह चाहते हैं कि मैंने दो साल सीखा और सीखने के लिए यहाँ रहूँ। इतने में उसने किसी और जगह नौकरी के लिए अर्ज़ी भेजनी थी तो उसके लिए बड़े डाक्टर के पास गया और उससे प्रार्थना की कि महाराज! आपने तीन जगह मेरी सिफ़ारिशें भेजी हैं तो एक सिफ़ारिश की चिट्ठी और भी लिख दीजिये। तो वह डाक्टर उससे कहने लगा कि रामदेव! तू सब जगह अर्ज़ियाँ भेज रहा है क्या तुम्हें यह मर्सी हस्पताल पसन्द नहीं है। अब आप देखो कि पिता जी की चिट्ठी के बाद यह असर हुआ। चिट्ठी का असर होता है। यदि आप साधन में अंग से अंग लगाये और अगर आपके अन्दर फुर्ती नहीं आई है अर्थात् धारा नहीं आई है तो आप नपुंसक है, पिता जी नपुंसक नहीं है। कोई भी ऐसी बात नहीं है जो उनके नाम से आप सिद्ध करना चाहो और वह न हो, यह असम्भव बात है। वहाँ अमरीका में जो माँस खाने वाले हैं उनकी सिद्धि हो रही है, आप तो सब शाकाहारी हो। पिता जी को देखते ही उनका रंग, रूप बदल जाता है और वहाँ भी लोग माँस को छोड़ रहे हैं। क्या पिता जी की हस्ती की कोई तुलना कर सकता है?

तो रामदेव कहता है कि उस डाक्टर ने कहा तुम्हें मर्सी हस्पताल पसन्द नहीं है? रामदेव ने बताया कि मैं जवाब नहीं दे सका, मैं तो घबरा गया कि यह कह क्या रहे हैं। उस डाक्टर ने समझा कि इसको तनख्वाह ज्यादा चाहिए तो वह डाक्टर कहता है कि रामदेव! भाई हम अभी तो तुम्हें सारे दिन के लिए नहीं बल्कि Part Time अर्थात् आधे दिन के लिए लगाते हैं, घबराओ मत। हम तुमको पैंतीस हज़ार डालर देंगे। आप सोचो लोगों को तो पच्चीस हज़ार डालर सारा दिन काम करने के भी नहीं मिलते। अच्छा भई, तुम अगर इससे भी घबराते हो तो अपनी प्राइवेट प्रैक्टिस भी कर सकते हो, रामदेव बोला नहीं। कहता है **'मौनं सर्वार्थसाधनम्'** अर्थात् चुप रहने से सब कुछ सिद्धि होती है।

यहाँ आपको एक कथा सुना दूँ। आपने सुना होगा कि कालिदास बड़े महान कवि हुए हैं। कालिदास कवि ही नहीं थे बल्कि एक सन्त भी थे। कालिदास की रचनाओं को पढ़ो तो आप देखोगे कि उनका दिमाग कहाँ-2 उड़ान भरता है। यह भारत भूमि सन्तों की भूमि है, सन्त कोई अभी नहीं हुए, शुरू से ही ऋषि, मुनि आदि बहुत सन्त हुए हैं। सनातन धर्म और सन्तमत एक है। तो कालिदास कैसे इतने विद्वान् बने जबकि वो बिलकुल अनपढ़, अक्खड़ और अशिक्षित थे वह तुम्हें मैं बताता हूँ। विद्योत्तमानाम की एक राजकुमारी थी, उसका एक गुरु था जो उसको पढ़ाता था। पढ़ाते-पढ़ाते जब वह उससे दर्शन अर्थात् परमात्मा या मालिक की बातें करता तो वह चूँकि बहुत विदुषी थी, उससे भी ज्यादा समझती थी इसलिए कई बार उससे उसका मतभेद हो जाता था। जो असली गुरु होता है उसका अगर मतभेद होता है तो उसे क्रोध नहीं आता बल्कि वह मतभेद को समझकर बड़े प्यार से बात करता है। पिता जी की बहुत ऐसी बातें मेरे साथ हुईं, उन्होंने मेरी बहुत परीक्षा ली। आप समझते हैं कि मैं अमरीका में बैठा था तो उनके साथ नहीं था। ऐसी बात नहीं है बल्कि 18, 19 साल उन्होंने मेरी परीक्षा ली, वो निरन्तर मेरे साथ रहते थे।

एक बार बहस हो गई और विद्योत्तमा ने गुरु की बात नहीं मानी। गुरु क्योंकि पूरा सन्त तो था नहीं, उसमें ज़रा अहंभाव था। जो पूरा सन्त होता है उसमें अहंकार नहीं होता और वह कभी किसी से घृणा कर ही नहीं सकता क्योंकि वह जानता है कि हर एक में मालिक की धार है तो वह घृणा किससे करे? मुझे बताओ कि जिसके हृदय में वह नहीं है? परन्तु उस गुरु ने देखा कि उसकी जो शिष्या थी उसने उसकी बात को माना नहीं इसलिए अपने मन में कहा, अच्छा देखूँगा मैं इसका बदला लूँगा। जहाँ बदला व निन्दा है, वहाँ काल है परन्तु निन्दा की परवाह मत करो। कबीर साहिब ने कहा है-

कबीर निन्दक ना मरे, जीवे आद जुगाद।
हम तो सतगुरु पाइया, निन्दक के परसाद॥

क्या निन्दक के प्रसाद से सत्तपुरुष मिल सकता है? मिल सकता है। यह निन्दा तुम्हारी परीक्षा है। कैसे? अगर तुम गुरु से प्यार करते हो और दूसरा कहता है कि तुम नहीं करते हो, तो अगर तुम नहीं करते हो तो दूसरा ठीक है। यदि निन्दक निन्दा करता और तुम्हारे में दोष है तो तुम डरोगे। अगर तुम्हारे में दोष नहीं है तो निन्दक आपकी जितनी निन्दा करेगा उतना आपका प्यार मालिक से बढ़ेगा। मीरा बाई का हाल आपने सुना होगा, मीरा का प्यार मालिक से था। मीरा का प्यार उस कृष्ण से नहीं था जिसको आप शरीरधारी कहते हैं बल्कि वह तो बार-बार अजर, अमर और अविनाशी कहती थी क्योंकि वह मालिक को अजर, अमर जानती थी। क्या उसकी निन्दा नहीं हुई थी? निन्दा जितनी हुई उतना प्यार, प्रेम मालिक से बढ़ता गया और परिणाम-स्वरूप मालिक में मिलकर गायब हो गई, शरीर भी नहीं रहा। तो अगर कोई सच्चा प्रेमी है, सच्चा मालिक को मानने वाला है तो वह उस निन्दा की परवाह नहीं करेगा।

तो मैं आपको यह कह रहा था कि वह गुरु काल का गुरु था परन्तु था विद्वान्, इसलिए जब विद्योत्तमा ने इस प्रकार उसका अनादर सा किया तो उसने मन में ठान लिया कि मैं राजगुरू हूँ। जब महाराज मुझे कहेंगे कि इस लड़की के लिए लड़का ढूँढो तो मैं ऐसा अक्खड़ व भोंदू लाऊँगा जो बिल्कुल कुछ न जानता होगा। यह जो अपने-आपको समझती है कि मैं बड़ी विदुषी हूँ तो मैं इसका बदला लूँगा और उसने ऐसा ही किया। उस राजकुमारी ने यह कह रखा था कि मैं उससे शादी करूँगी जो मेरे से वाद-विवाद करके मुझे हरा देगा अर्थात् मुझसे ज्यादा ज्ञानवान् होगा।

जब वह मौका आया तो वह ढूँढने के लिए गया। जंगल में देखा कि एक अल्हड़ सा आदमी वृक्ष पर बैठा हुआ उसी टहनी को काट

रहा है जिस पर वह बैठा हुआ है। उसने सोचा कि इससे भोंदू तो कोई और मिलेगा नहीं, वह था कालिदास। उन्होंने उसको कहा अरे भई ! नीचे आ, नीचे आ। क्या है? मैं नहीं आता। अरे ! बात सुन ! मैं तेरी शादी राजकुमारी से कराऊँगा। वह नीचे उतर आया और आकर कहने लगा हाँ, हाँ क्या कहते हो, क्या बात है? उस गुरु ने उसको कहा कि भई ! तू मेरे साथ चल तेरी शादी राजकुमारी से कराऊँगा, परन्तु एक बात मानना। क्या बात? चुप रहना, **''मौनं: सर्वार्थसाधनम्''** उस मूर्ख को कहा कि तू बिलकुल चुप रहना। परन्तु बिलकुल चुप भी नहीं रहना चाहिए, संसार में यदि चुप रहोगे तो फिर कुछ नहीं होगा। हमारे प्रिय डॉ. साहिब जो सच्चे हैं, बोलते हैं बोलना चाहिए नहीं तो कुछ काम ही नहीं होगा। परन्तु उसने तो धोखे से उस राजकुमारी की शादी करवानी थी इसलिए उसने उस मूर्ख से कहा कि राजकुमारी को हराने का तरीका यह है कि तू बोलना मत, बिलकुल चुप रहना। वहाँ पर महाराजा साहिब को सूचना दे दी कि मैं एक बड़ा विद्वान् ला रहा हूँ वह आपकी पुत्री से वाद-विवाद करके उसे हरा दे तो उससे उसकी शादी कर देना। यहाँ एक बात है कि गुरु जो बात कह दे उस पर चलोगे तो वह चाहे ग़लत भी हो आगे चलकर ठीक हो जायेगी। परन्तु जो गुरु की आज्ञा का पालन नहीं करता वह न इस जहान का रहता है न वहाँ का रहता है।

मूर्ख ने उसकी बात को मान लिया, मूर्ख ने जो जूते पहने हुए थे वे बहुत फटे-पुराने थे। गुरू ने कहा भई, तू आगे चलकर राजकुमार बनने वाला है, इन जूतों को फैंक दे परन्तु उसको उनसे मोह था इसलिए वह उन जूतों को एक कपड़े में लपेट करके अपनी बगल में दबा के ले गया। वहाँ गये तो हज़ारों आदमी प्रतीक्षा कर रहे थे कि राजकुमारी का गुरु एक बड़े विद्वान् को ला रहा है। रास्ते में लोग इधर-उधर नमस्कार करने लगे और पूछा कि यह आपकी बगल में क्या है? तो बोलना तो नहीं था परन्तु उसने ग़लती से कह दिया

कण्टकाचूर्णी अर्थात् कांटों को चूर्ण करने वाली। चूर्णी अब किताब का नाम भी होता है, जिस किताब में सच्चाई का चूरा-चूरा कर दिया जाता है अर्थात् जिसमें व्याख्या की जाती है उसको भी संस्कृत में चूर्णी कहते हैं जैसे व्याकरणचूर्णी अर्थात् ग्रामर का चूर्ण। लोगों ने बहुत चूर्णी पढ़ी थीं परन्तु उन्होंने कहा भई ! कण्टकाचूर्णी तो हमने कभी सुनी भी नहीं, यह तो कोई बड़ी भारी होगी इसलिए उन्होंने कहा बड़ा विद्वान् है। बड़ा प्रभाव पड़ गया। केवल प्रभाव पड़ जाने से भी लोग मान सकते हैं क्योंकि उनको जब लाभ होता है तो अपने आप से होता है परन्तु वे समझते यह हैं कि गुरु से हो रहा है।

मंच बने हुए थे, राजकुमारी एक मंच पर बैठी थी दूसरे पर उन्होंने उस अक्खड़ विद्वान् को बिठा दिया। तो गुरु कहने लगे देखो भई राजकुमारी विद्योतमा ! यह बड़ा भारी विद्वान् है इसका कोई मुकाबला नहीं, विश्व में एक है। तेरे से बहस करेगा परन्तु बोलेगा नहीं। उसने कहा मैं भी नहीं बोलूँगी बिना बोले बहस करेंगे। विद्योतमा ने एक ऊँगली उठाई और उस अक्खड़ कालिदास ने दो उठा दीं, उसने जब तीन उठाई तो कालिदास ने चार उठा दीं। विद्योत्तमा ने पाँच ऊँगलियाँ उठाई उसने यूँ मुक्का कर दिया तो विद्योत्तमा ने कहा महाराज ! ये बहुत विद्वान् हैं मैं हार गई, इनसे शादी करूँगी। शादी हो गई। जब उससे पूछा गया कि तूने यह हार क्यों मानी? उसने कहा कि मैंने उससे कहा कि ईश्वर एक है तो उसने उत्तर दिया कि ईश्वर ही नहीं ईश्वर के साथ प्रकृति भी है, प्रकृति-पुरुष दो हैं। तब मैंने उससे कहा कि प्रकृति के अन्दर तीन गुण होते हैं सत्, रजस् और तमस्। तो उसने मुझे यह बताया कि ये बातें वेदों में लिखी हुई हैं इसलिए विद्वान् हुआ।जब मैंने कहा कि पाँच तत्त्व होते हैं– पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु और आकाश तो उसने कहा कि यह क्या कहती है, सभी एक परमतत्त्व से निकले हैं, उसने एक मुक्का दिखाया था न। इसलिए यह जीत गया। जब उसका

विवाह हो गयाऔर उससे बात करने लगी तो उसको तो कुछ नहीं आता था, काला अक्षर भैंस बराबर था। उसे बड़ा दु:ख हुआ परन्तु क्योंकि वह पतिव्रता थी, पतिव्रता पति को ही मालिक मानती है तो उसने यह नहीं कि उसको छोड़ दिया बल्कि उसने उसको पढ़ाना शुरू किया और ऐसा पढ़ाया, ऐसा पढ़ाया कि वह बड़ा भारी विद्वान् हो गया। हमारी संस्कृति में तलाक नहीं है इसका हमें बड़ा गौरव है। इससे हम अपने-आपको समझते हैं कि हमारा देश ऊँचा है और रहेगा। यही नहीं कि आप साधु, सन्त बनकर ध्यान लगाकर ही ऊपर जा सकते हैं, स्त्री पतिव्रता हो तो भी वह परमतत्त्व पर पहुँच सकती है।

तो मैं कह रहा था कि चुप रहने से भी कभी-कभी काम सिद्ध होता है और बताया कि पिता जी की चिट्ठी ने रामदेव को यह कमल दिखाया। उन्होंने आठ साल पहिले ही अमरीका में शरीर छोड़ने का Plan बनाया हुआ था। यद्यपि मैंने शरीर की दृष्टि से उनको रोकने की बड़ी कोशिश की क्योंकि शरीर में विराजमान होने से उनकी जो Radiation व लहरें थीं वे बहुत जल्दी असर करती थी। पिता जी परमतत्त्व के अवतार हैं, थे नहीं बल्कि हैं। ऐसे गुरु, परमसन्त परम दयाल जैसे गुरु, सर्वज्ञ, सब कुछ जानने वाले और सर्वव्यापी जो इस समय मौजूद हैं और सर्वशक्तिमान् हैं, लोगों ने उनको समझा नहीं केवल गुरु, गुरु मानते रहे या सत्तगुरू वक्त भी मानते रहे। जो अनुभव मुझे उनके साथ हुआ उसकी व्याख्या नहीं की जा सकती। पिता जी ने मुझे कहा और मैं भी मानता हूँ कि मैं पिता जी के साथ इस जन्म में ही नहीं बल्कि कई जन्मों में उनके साथ रहा हूँ। यह मत समझिये कि एक दिन में ही उन्होंने कह दिया कि आ भई शर्मा तू यहाँ काम करना, नहीं। यह बात नहीं है, अभी समय नहीं है यह पूरा बाद में बताऊँगा। आप धन्य हैं कि आपने दर्शन किये, युगों में आने वाले लोग तो केवल उनके बारे में पढ़ेंगे ही पर आपने साक्षात् उनको देखा, आप बहुत धन्य

हैं। मेरे प्यारे सत्संगियों! मेरे प्यारे गुरु के तुम रूप!! इस मन्दिर से अगर आपको प्यार है तो इस मन्दिर को बिलकुल ऐसे पवित्र रखना है जैसे पिता जी ने रखा है। किसी से घृणा व संकोच नहीं करना, कैसे करोगे? जब कि सब के अन्दर वही एक मालिक है। जो सच्चा प्रेमी है, सच्चा मालिक को मानने वाला है वह कभी निन्दा की परवाह नहीं करेगा।

मेरे यह सत्संग शुरू करने से पहिले आपने पिता जी का सत्संग टेप रिकार्ड से सुना, इसमें उन्होंने कहा कि मनुष्य पूर्ण है, तो जब हम इस योनि में आये हैं तो हमें चाहिए कि इस मनुष्य-शरीर को सबसे उत्तम माने। पूर्णता आपके अन्दर है, यह न समझें कि आप निम्न श्रेणी में हैं बल्कि अपने-आपको पूर्ण समझ के चलो और जो पूर्णता हमारे ऊपर पर्दे पर पर्दे, पर्दे पर पर्दे पड़े होने के कारण छुपी हुई है उसको जगायें। इसके लिए सत्संग जरूरी है, सत्संग की ही सारी महिमा है। सत् का अर्थ है परमतत्त्व और संग का मतलब है उसके साथ संगति करना। सत्तगुरु वह है जो आपकी बार-बार घिसा-घिसा कर, सुना-सुना व बता-बता के आपके अन्दर एक दिन कभी ऐसा झकोला देता है कि सुमिरन ध्यान करते रहने से एक दिन आप कहें कि ओह मुझे बात समझ आ गई है और तभी वह पूर्णतारूपी ज्योति की चमक आपके अन्दर जाग उठेगी।

आप बड़े सौभाग्य से इस मन्दिर में आये हैं और आपने परम दयाल जी के चरण छुये, दर्शन किये और उनके सत्संग सुने तो आप सब लोग इसी जन्म में पूर्णता हासिल कर सकते हो, वह तो आये ही इसलिए थे। जैसे कि आपने सुना होगा कि उनके गुरु महाराज दाता दयाल महर्षि शिव्रत लाल जी महाराज ने उनके बारे में लिखा है कि वे पिछले जन्म में गुरु हरगोबिन्द सिंह जी के रूप में सात हज़ार कैदियों को साथ ले के ही जेल से बाहर निकले थे।

वह मालिक परम दयाल है और वह सब जगह है–

तू है सब का स्वामी सब का दाता।
जो हो जाये तेरा उसी का तू है॥

उसके बनो तो सही, उसके होओ तो, वह तुम्हारे अन्दर है अन्यथा पिता जी क्यों कहते कि तुम मेरे गुरु हो–

वही नर जहाँ में सुखी है निरन्तर।
कि दिन रात जिसको तेरी जुस्तजू है॥

रात दिन जिसका मालिक की लगन व लौ लगी हुई है वह क्या किसी से घृणा करेगा। मालिक की तलाश में वह गाली भी बर्दाशत कर लेगा और दिन रात उसकी जूस्तजू करता और काम करता हुआ अपने–आपको मालिक के अर्पण करता रहेगा। मैं यह बात ठीक कह रहा हूँ कि हमारे डॉ. जौड़ा साहिब निरन्तर रात–दिन लगे हुए हैं और उनको मालिक की जूस्तजू है–

जो सब को तुम्हीं में और तुम्हें सब में देखे।
वह आशिक है तेरा और तू माशूक है॥

जो मालिक को सब में देखे वही उसका सच्चा आशिक है, सत्संग में लौ लगाओ क्योंकि इन पर्दों को हटाने के लिए सत्संग जरूरी है।

आप यह मत समझिये कि मैं अमरीका में हूँ, मेरी वहाँ पर रहने की एक क्षण भी इच्छा नहीं। मैं यहाँ पर आ गया हूँ, मेरा हैडक्वार्टर यही है, अमरीका जाऊँगा थोड़े समय के लिए वो भी पिता जी की आज्ञा का पालन करने के लिए। आप यह मत समझिये कि मैं नहीं आ रहा। इस साल वैसाखी का जो सत्संग होगा उसमें खास सत्संग दिये जायेंगे और जो कुछ मैंने पिता जी के सत्संगों से अनुभव किया है वह मैं आपको सब बताऊँगा।

राधास्वामी।

सत्संग (M : 0 94183–70397)

सत्संग दयाल कमल जी महाराज

दिनाँक 31-08-14

जब दया गुरू की हुई, चरनों की भक्ति मिल गई।
सब निबलता मिट गई, निश्चय की शक्ति मिल गई॥
आ गये सत्संग में और संग सत का हो गया।
दुर्मति जाती रही, जब गुरू के मत का हो गया॥
प्रेम का प्याला पिया, पीते ही मतवाला बना।
मन की सुध बुध खो गई, भोला बना भाला बना॥
पाँव में मस्तक नवाया, चित से धारा गुरू का रंग।
कीट जिसको पहिले सब, कहते थे अब ठहरा भिरंग॥
आप में आपा लखा, आपे में आपा ज्ञान था।
भरम में लटका हुआ, भूला था और अज्ञान था॥
शब्द के सुनते ही अन्तर, में जो विरती सो गई।
छिन पल में वासना, माया की सारी खो गई॥
राधास्वामी राधास्वामी, राधास्वामी राग को।
गा रहा हूँ धन्य मैं, कहता हूँ अपने भाग को॥

राधास्वामी

जिन्दगी देखी, दुनिया देखी। इस दुनिया और इस ज़िन्दगी का बहुत बड़ा फर्क है। अगर दुनिया के साथ ज़िन्दगी गुजारोगे तो सुख नहीं पाओगे। अगर अपने-आप में ज़िन्दगी गुजारोगे तो सुख मिलेगा। सुख बाहर नहीं है सुख तुम्हारे अपने अन्तर है। संसार की सबसे बड़ी दौलत भी तुम्हारे अपने अन्दर है। आज इस बात का आपको प्रमाण देता हूँ। दाता दयाल जी का एक शब्द सुनाता हूँ कि वास्तव में हमें क्या चाहिए? जो हमें चाहिए हम उसकी इच्छा नहीं करते जो सदा रहने वाली है बल्कि हम उसकी इच्छा करते हैं जो सदा रहने वाली नहीं है। जो चीज़ सदा रहने वाली नहीं है हम उसके लिए दौड़-धूप कर रहे हैं। जो सदा हमारे साथ रहती है, जो हमारा असली धन है उसके लिए लिए हम कोशिश ही नहीं करते।

गुरू स्वामी दया करो आज नई ॥

आज दाता दयाल जी महाराज कह रहे हैं कि आज आप नई दया कर दो।

बन्धन छूटे मोह भरम का, मन से चिंता भागे।

दाता दयाल जी ने कहा कि पहले मोह, भ्रम का बन्धन छुड़ाओ। यह मोह बाल-बच्चों से मोह वाला मोह नहीं है। बाल-बच्चों से तो मोह होना चाहिए। परिवार से मोह होना चाहिए। लेकिन उन्होंने कहा कि भ्रम से मेरा मोह हट जाये। वह भ्रम क्या है? जब हम अभ्यास करने बैठते हैं, नाम जपने बैठते हैं तब हमारे मस्तिष्क में तरह-तरह की दुनिया पैदा होती है। कभी परिवार आ जाता है, कभी कोई इच्छा पैदा हो जाती है।

जो नाम जपने के समय दुनिया बदलती है, जो नज़ारे तुम अन्दर देखते हो, घण्टा सुनते हो, गुरू का रूप देखते हो या कोई और दृश्य देखते हो वह सारे का सारा भ्रम है। वह सच्चाई नहीं है। दाता दयाल

जी महाराज कहते हैं ऐ मेरे सद्गुरू दया करो मेरा वह भ्रम दूर हो जाये। जब भी मैं नाम जपने के लिए बैठूँ मेरे अन्दर जो भी ख्याल उठते हैं, दृश्य बनते हैं मैं उन्हें न देखूँ। मैं आगे जाऊँ। मन से चिन्ता भाग जाये। सारी दुनिया चिन्ता में है। चिन्ता क्यों पैदा होती है? क्या जब हम पैदा हुए तो चिन्ता लेकर आए? तब कोई चिन्ता नहीं थी। जब तक हमें अपने माता-पिता का, भाई-बहन का, अपनी जाति, अपने धर्म का पता नहीं था तब तक कोई चिन्ता नहीं थी। इसीलिए मेरे सद्गुरू परमदयाल जी महाराज कहा करते थे कि अगर भगवान का दर्शन करना है तो छः महीने के बच्चे का करो क्योंकि उसमें भेद-भाव है ही नहीं है। उसको न धर्म का पता है, न जाति का पता है उसे कुछ पता नहीं है। हमारी चिन्ता कैसे जायेगी?

सन्तो सो सद्गुरू मोहे भावो।
जो आवागवन मिटावे॥

चिन्ता तब जायेगी जब हमें अपने-आप का ज्ञान हो जायेगा। जब अपने-आप का ज्ञान हो जाता है, तो इन्सान अपने-आपको उस मौज के सुपुर्द कर देता है। अपने मन की मौज को छोड़ देता है। वह मन के आधीन नहीं रहता। मन से आगे चले जाता है। जब तक हम मन में है। जब तक हम उन दृश्यों को देखकर आनन्द ले रहे हैं। तब तक हमें चिन्ता रहेगी-रहेगी-रहेगी। कोई भी उसे टाल नहीं सकता। इसीलिए दाता दयाल जी कहते हैं-मेरा भ्रम छूट जाये, मोह छूट जाये ताकि मेरी चिन्ता भी खत्म हो जाये। मुझे कई बार बुर्जुगों के फोन आ जाते हैं कि बाबा जी आज हमने यह देखा, वह देखा। मैं कहता हूँ यह सब नहीं है यह आपके मन का भ्रम है। लेकिन इन्सान को विश्वास नहीं आता। वह कहते हैं कि हमने अन्दर गुरू का रूप देखा बड़ा आनन्द आया। वह रूप तुमने अपने मन से बनाया। जो भी दृश्य तुम्हारे मन में बनते हैं वे सब देखे, पढ़े-सुने होते हैं।

परमदयाल जी महाराज कहा करते थे– क्या किसी हिन्दू को जो राम या कृष्ण को मानने वाला है, उसे अभ्यास में जीसस–क्राईस्ट नज़र आया या उसको श्री गुरू नानक साहेब के दर्शन हुए। गुरू नानक देव जी के दर्शन केवल उसको होंगे जो गुरू नानक देव को मानता है। ऐसे ही मुसलमानों में राम प्रकट नहीं होगा। उनके अन्दर मोहम्मद ही पैदा होगा, राम नहीं–

ऐ इन्सान तेरा अपना ही मन बनाने वाला है, तेरा अपना ही मन बिगाड़ने वाला है। जब तक तुम मन में हो तब तक चिन्ता रहेगी। जब तक मन में हो तब तक तुम्हें अन्दर के दृश्य प्यारे लगेंगे और तू आगे नहीं जा सकता। इसीलिए स्वामी जी महाराज का एक शब्द है– **'गगन में एक फूल खिला हुआ है'** सभी भँवरे वहाँ जाकर रूक गए। वह फूल हमारी दोनों आँखों के बीच सहस्रकंवल है। जब हम वहाँ बैठते हैं तो तरह–तरह के ख्याल उठते हैं, तरह–तरह के नज़ारे उठते हैं, तरह–तरह के दृश्य उठते हैं और हम वहीं जाकर रुक जाते हैं। हम आगे जा ही नहीं सकते हम नींद में चले जाएँगे या नज़ारों में फँस जाएँगे। दाता दयाल जी महाराज कहते हैं ऐ मेरे सद्गुरू अब आप दया करो मैं इस भ्रम के जाल से निकल जाऊँ और चिन्ता से मुक्त हो जाऊँ।

बन्धन छूटे मोह भरम का, मन से चिंता भागे।
दुख आपत्ति और संकट जावे, भक्ति भजन चित लागे॥

उन्होंने कहा है कि दु:ख भी चला जाये, आपत्ति भी चली जाये, कष्ट भी चला जाये। मेरा जीवन भक्ति और भजन में कटे। यह बात जो दाता दयाल जी ने कही क्या दुनिया को इसकी जरूरत है? दुनिया को इसकी जरूरत नहीं है, जहाँ भक्ति है, भावना है, प्रेम है, श्रद्धा है वहाँ सब कुछ मिलेगा। वहाँ दुख–आपत्ति नहीं रहेंगे। दुख किस बात का है? सबसे पहले शारीरिक दुख सबसे बड़ा दुख है। मन का दुख

नहीं होता। मन का शोक होता है। शोक देखा नहीं जाता, वह मन महसूस करता है। दु:ख या रोग शरीर महसूस करता है। आपत्ति वह होती है जो चीज़ तुम्हारे मन के मुताबिक न हो फिर तुम सोचते हो कि यह तो आफत ही आ गई। कष्ट वह होता है जो सारे ही परिवार पर आ गया जैसे घाटा पड़ गया। सारे परिवार पर ही कष्ट आ गया। दाता दयाल जी महाराज कह रहे हैं–

बन्धन छूटे मोह भरम का, मन से चिंता भागे।
दुख आपत्ति और संकट, कष्ट भी चला जाये॥

इन्सान भक्ति मन के साथ करता है। भक्ति शरीर से नहीं होती, शरीर से पूजा होती है। भक्ति जब भी होगी मन से होगी। मन क्या है? मन एक ऐसी गंगोत्री है, ऐसी यमुनोत्री है जहाँ से हर वक्त ख्याल रूपी पानी की लहरें निकल रही हैं। गंगा हमारे मस्तिष्क से निकलती है। हमारे मन के अन्दर से हर वक्त ख्यालों की लहर बहती रहती है। जो अच्छे ख्याल हैं, जो नेक ख्याल हैं, जो बदी के ख्याल हैं और जो दूसरी तरह के ख्याल हैं, बुराई के ख्याल हैं, बदनीति के ख्याल हैं, किसी को कष्ट देने के ख्याल हैं, किसी का बुरा सोचते हैं वह गंदा जल निकल रहा है। जब आदमी भक्ति करता है तो उसको अपने मन की हालत का पता लग जाता है।

ऐ इन्सान जो भी ख्याल तेरे अन्दर से निकल रहा है, यही तेरी ज़िन्दगी का आधार है। अच्छा सोचेगा तो तेरी ज़िन्दगी अच्छी बन जायेगी। बुरा सोचेगा तो बुरी बन जायेगी। तुम ही अपने मन के मालिक हो। क्या वह ख्याल बदले जा सकते हैं? हाँ, वह ख्याल बदल जा सकते हैं। कहाँ? सद्गुरू के सत्संग में। सत्संग में यह भेद मिलता है कि ऐ इन्सान! तूने कैसा ख्याल लेना है। तेरे ही ख्याल ने तेरे लिए दुख पैदा करना है। तेरे ही ख्याल ने तेरे लिए आपत्ति पैदा करनी है। तेरे ही ख्याल ने तुमको सुख देना है, तेरे ही ख्याल ने तुमको शान्ति

देनी है। तू अपनी ज़िन्दगी का मालिक है। हजूर फरमाया करते थे कि जैसे बन्दूक से गोली निकल गई और जुबान से कुछ गलत निकल गया तो तुम हाथ जोड़ कर माफी माँग लोगे लेकिन जो बुरा ख्याल अन्दर से लिया उसका तो असर होगा ही। जो ख्याल तुम्हारे अन्दर से निकल गया, उस पर तुम्हारा काबू नहीं है। उसकी तुम माफी भी नहीं माँग सकते। अगर तुमने कोई गलत शब्द बोल दिया और उसका किसी को दुख लगा तो उसकी तुम माफी माँग लोगे।

भक्ति और भजन क्या करता है? भक्ति और भजन से हमें अपने मन के ऊपर नज़र रखने की विधि मिलती है। दाता दयाल जी ने कहा है–

आ गए सत्संग में, संग सत् का हो गया।
दुर्मति जाती रही, जब गुरू के मत का हो गया॥

बुरीब ातेंच लीज ातीह ैं अ ैरअ च्छीअ ाज ातीह ैं। Positive Thinking आ जाती है। वह यह कहने को मज़बूर हो जाता है– **'नानक तेरे भाणे सर्वत दा भला'**। इसलिए दाता दयाल जी कहते हैं– ऐ मेरे सतगुरू आज मुझे एक नई बात बता दे। वह नई बात क्या है? ऐ इन्सान तेरी ज़िन्दगी का आधार, तेरी ज़िन्दगी का मालिक तेरा अपना ही मन है। तेरी ज़िन्दगी को बिगाड़ने वाला भी तेरा अपना ही मन है। तेरा मन ही तेरा रक्षक है, तेरा मन ही तेरा भक्षक है लेकिन मन बनता कैसे है? बुर्जुगों ने कहा है– **जैसा खाइये अन्न, वैसा होगा मन।** अगर हमारी खुराक ठीक नहीं है, हमारी कमाई का साधन ठीक नहीं है, यदि हम चार–सौ–बीसी करके, हेराफेरी करके, चोरी करके, झूठ बोलकर पैसा कमाते हैं तो वह अन्न हमारा मन खराब करेगा। हमारे ख्याल कभी शुद्ध नहीं हो सकते।

इसीलिए सन्तों ने बार–बार कहा– हक और हलाल की कमाई करो, नेक कमाई करो ताकि हमारा मन ठीक रहे। हमारी सबसे बड़ी दौलत हमारा मन है। ऐसे धन को क्या करना, जब रात को नींद ही नहीं

आये। सबसे बढ़कर शांति है, नींद है। ऐ इन्सान तेरी सबसे बड़ी दौलत मन की शान्ति है। पहले शरीर की शान्ति, मन की शान्ति, आत्मा की शान्ति। वह कब मिलेगी, जब दया गुरू की होगी। फिर ठहराव आ गया –

घट में दर्शन पाओगे, सन्देह इसमें कुछ नहीं।
मैं तो हूँ घट में तुम्हारे, ढूँढ लो मुझको वहीं॥

गुरू तो आपके घट में ही है–

माता पिता की सेवा धारूँ, साध चरण में प्रीति॥

मैं जाग गया हूँ, मेरे सतगुरू प्यारे, मैं माता–पिता की सेवा करूँ। मेरा बेटा कल गुड़गाँव से आया। मैंने उससे पूछा बेटा कैसे आना हुआ? वह बोला कैनेडा में मेरा दोस्त था उसकी माता जी की (लुधियाना में) Death हो गई वह मेरा परम मित्र है। इसलिए उसकी माता के संस्कार में मुझे आना पड़ा। मैंने पूछा माता जी को क्या हुआ? बेटा बोला सभी बच्चे कैनेडा में है, यहाँ पर माता जी अकेली रहती थी। मैं तो बड़ा भाग्यशाली हूँ। मेरा बेटा कैनेडा गया। वहाँ पर 10 साल रहा और आकर कहने लगा मैंने नहीं जाना कैनेडा, न मैं आपको मिल सकता हूँ और न आप मुझे मिल सकते हैं, इसीलिए मैं तो यहाँ आ गया।

ऐ इन्सान! अगर दुनिया में कोई देवी, देवता या कोई तीर्थस्थान है जहाँ जाकर मत्था टेका जाए तो वह स्थान माता–पिता के चरण हैं। जिसने माँ–बाप की सेवा नहीं की, वह दुनिया में कुछ भी प्राप्त नहीं कर सकता। धन जितना मर्ज़ी कमा ले। दुनिया धन की कमाई समझती है लेकिन धन कमाई नहीं है। दुनिया बड़ी–बड़ी बिल्डिंग बनाकर समझती है कि हमने यह बना लिया। जिस बच्चे के सिर पर माँ–बाप ने हाथ रख दिया उस बच्चे को दुनिया की सबसे बड़ी दौलत मिलेगी। दुनिया का सुख, दुनिया का प्रेम, दुनिया की शान्ति, सब्र,

सन्तोष उसको मिलेगा। इसलिए कहीं जाने की जरूरत नहीं है। हमारे शास्त्र कहते हैं जिसके साथ माँ-बाप हैं, उन्हें किसी चीज़ की जरूरत नहीं है।

मगर हो क्या रहा है? एक माँ ने चार बच्चे पाल दिए और चार मिलकर एक माँ को नहीं पाल सकते। दिल्ली में एक परिवार में तीन लड़के थे उन्होंने फैसला किया कि माँ एक बेटे के पास तथा बाप दूसरे बेटे के पास रहेगा। माँ-बाप कहते हैं कि तुम खुश रहो हमने किसी के पास भी नहीं रहना। दाता दयाल जी कहते हैं माता-पिता की सेवा मिले। मैं कहता हूँ जहाँ मर्ज़ी जाओ लेकिन पहले अपने माता-पिता को भी देख लो जिन्होंने तुम्हें जन्म दिया है। जब तक हमारे माता-पिता थे हम भाइयों ने उनकी खूब सेवा की। माता-पिता के आशीर्वाद से ही सद्गुरू मिला और सद्गुरू मिला तो ज्ञान मिला।

मात-पिता की सेवा धारूँ, साध चरण में प्रीती।

साधु के चरणों में बैठो, साधु कौन है? आजकल तो साधुओं की भीड़ लगी हुई है। **'साध वो जो मन को साधे'।** जिसने चोला बदल लिया वह साध नहीं है। जिसने बनावट की है वह धोखा कर रहा है। साधु की पहचान है वह बनावट नहीं करता, दिखावा नहीं करता, सन्त भी दिखावा नहीं करता, सन्तों की टोलियाँ नहीं होतीं। **'साध वो जो मन को साधे।'** तुम साधु हो बशर्ते कि तुम मन पर नियन्त्रण करते हो, मन को देखते हो, मन की चाल को समझते हो, मन के ख्यालों को रोकते हो तो तुम साधु हो। साधु वह जो साधन करे। साधु की पहचान नहीं हो सकती।

सत संगत के वचन सुनूँ जब, उपजे घट परतीती।

दाता दयाल जी कहते हैं कि संगत में जाऊँ और वचन सुनूँ और उन वचनों को मैं परतीत लाऊँ, श्रद्धा लाऊँ, तब मेरा काम बनेगा। यह नहीं कि इधर से सुनो और ऊधर से निकाल दो फिर बात नहीं बनेगी।

जाके गुरू के पास बैठो, वचन उनके सुनो।
जो सुनो उसको विचारो, जो विचारो उसको गुनो॥

पशु घास को फटाफट-फटाफट खा लेता है बाद में जुगाली करता है तभी उसका घास पचता है, वैसे नहीं पचता। ऐसे ही सत्संग का वचन पहले पकड़ो फिर सोचो विचार करो। हफ्ते बाद सत्संग होता है, हफ्ते भर उसका अपने अंदर मंथन करो। मन में कैसे ख्याल आते हैं? कौन से ख्याल आते हैं? हमारे अपने ही ख्याल सुख दे रहे हैं और हमारे अपने ही ख्याल दुख दे रहे हैं। हमारे पास कर्मोन्द्रियाँ हैं और हमारे पास ज्ञानोन्द्रियाँ हैं। हमारी कोई भी इन्द्री आँख, कान, नाक, जुबान, हाथ, पाँव कोई भी शरीर का अंग तब तक Activate नहीं होगा जब तक उसमें मन नहीं बैठेगा। तुम्हारा शरीर तब तक काम नहीं करेगा जब तक उसमें मन नहीं बैठेगा। कान भी बात तभी सुनेंगे और आँख भी तभी देखेगी। अगर तुम खाना खाने बैठे हो और तुमने अपना मन खाने की ओर नहीं लगाया तो तुम्हें स्वाद का क्या पता चलेगा।

राजा जनक को उनके मंत्री ने कहा कि आप कहते हैं कि आप विदेह गति में रहते हैं पर मेरा मन नहीं मानता। राजा जनक कहते हैं मंत्री जी कभी समय आयेगा तो मैं आपको यह बात समझाऊँगा। पहले तो बात यह है कि विदेह गति का मतलब क्या है? जो काम तुम कर रहे हो, उसमें पूरा ध्यान हो। अगर खाना खा रहे हो तो खाने में ध्यान होना चाहिए। काम कर रहे हो तो काम में ध्यान होना चाहिए। तुम सोने लगे हो तो तुम्हारा ध्यान अपने मन पर होना चाहिए कि मैंने सोना है, उस वक्त दुनिया नहीं होनी चाहिए इसको कहते हैं– सहज समाधि।

एक बार उस मंत्री ने बहुत घिनौना अपराध कर दिया और उसकी सज़ा मृत्यु थी। दरबार लगा उसका अपराध पेश किया गया और

निर्णय लिया गया कि इसको मौत की सज़ा होनी चाहिए। जब सजा का दिन आ गया तो राजा ने कहा, उसको मेरे पास बुलाओ। वह मेरा प्रिय मंत्री था। वह आज मेरे साथ खाना खायेगा। राजा ने अपने रसोइये को बुलाकर कहा कि तुमने आज खाने में ज्यादा नमक डालना है। दोपहर का खाना तैयार हो गया क्योंकि चार बजे तो उसको फाँसी लगनी थी। राजा ने उसको बुला लिया कि चलो आज इक्कट्ठे बैठकर खाना खाते हैं। खाना लग गया और मंत्री खाना खाने लगा जब उसने सारा खाना खा लिया तो राजा ने मंत्री से पूछा कि तुझे खाना कैसा लगा? खाना स्वादिष्ट था? मंत्री ने कहा मुझे नहीं पता कि खाना कैसा बना है, मेरे सामने तो मौत खड़ी थी। मैंने तो बस खाना खा लिया। मुझे नहीं पता कि नमक था या नहीं था। राजा जनक ने कहा कि मंत्री बात तेरी समझ में लग गई कि विदेह-गति क्या होती है, यही विदेह गति होती है कि तुम्हें अपनी मौत याद थी, खाना भूल गया।

हम हमेशा मन के साथ चलते हैं। राजा ने उसकी मौत की सज़ा माफ कर दी। मेरे सद्गुरू परमदयाल जी महाराज ने बार-बार कहा कि ऐ इन्सान! अगर तू अकेला अभ्यास करता है, साधन करता है, नाम जपता है, ध्यान लगाता है तो तू गलती पर है। तुझे यह सब करने के साथ-साथ सत्संग भी सुनना चाहिए। सत्संग में भेद मिलता है कि कहाँ ठहरना है और कहाँ नहीं ठहरना है। कौन सा दृश्य देखना है और कौन सा दृश्य नहीं देखना है वरना तू फँस जायेगा कि देवी प्रकट हो गई, नाचने लग गया, गुरू प्रकट हो गया तो नाचने लग गया फिर चेले बनाने शुरू कर दिए और भटक गया। इसलिए सत्संग की बहुत बड़ी महिमा है। सत्संग कहते किसको हैं? संग कहते हैं मिलाप को, जहाँ सत् के साथ तुम्हारा मिलाप किया जाये वह सत्संग है। वह सत् क्या है? क्या शरीर सत् है? शरीर सत् नहीं है यह तो पाँच तत्व का पुतला

है। हम सब उसी के बने हुए हैं। हम सब एक ही माटी के बरतन हैं। लेकिन हमारे मन में फर्क है। हमारे मन अलग-अलग हैं। जैसी-जैसी हमारी प्रवृति, जैसा-जैसा हमारे घर का वातावरण, जैसे-जैसे हमारे माता-पिता के संस्कार, जैसी-जैसी हमारी संगत। हम सबका मन अलग-अलग है। हम सबका मन एक नहीं हो सकता क्योंकि बाहर भी अनेकता है, मन भी अनेक हैं। तुम्हारा मन तुम्हारा है और मेरा मन मेरा है। मेरा मन तुम्हारा मन नहीं हो सकता और तुम्हारा मन मेरा मन नहीं हो सकता।

मन ख्यालों का एक चश्मा है जो हर समय, हर घड़ी बदलता रहता है। इसलिए इस पर क्या विश्वास करना। इस पर विश्वास करोगे तो मारे जाओगे। यह तुम्हें कहीं न कहीं ले डूबेगा। तीसरा रूप हमारी आत्मा है। हम सब प्रकाश रूप हैं और हमारी आत्मा प्रकाशमय है। लेकिन इससे परे एक और चीज़ है, जो इन तीनों में खेलती है। जो शरीर मन और आत्मा का साक्षी है। जो शरीर मन और आत्मा को चलायमान रखती है, वह है सुरत, वह है हमारी चेतना उसके सहारे ही यह सब कुछ चल रहा है। जहाँ उसका भेद दिया जाये कि ऐ इंसान! तू कौन है? कहाँ से आया है? कहाँ जाना है? उसको कहते है- सत्संग। जहाँ दुर्मति मिटती है, जहाँ सुमति आती है। जहाँ कुमति जाती है, जहाँ अच्छे ख्याल दिए जाते हैं। जहाँ जगाया जाता है कि तू जाग कि तू कौन है? कहाँ से आया है? उसको सत्संग कहते हैं, इसीलिए दाता दयाल जी महाराज कहते हैं- **सतसंगत के वचन सुनूँ जब, उपजे घट परतीती।** मेरे घट में प्रतीत हो कि सत्संग में बताया गया था कि मैं शरीर नहीं हूँ, मैं मन नहीं हूँ। मैं आत्मा भी नहीं हूँ तो मैं कौन हूँ? तब तुम में एक जज्बा पैदा होगा। वह कौन उस परम तत्त्व

का अंश है वह परम तत्त्व प्रकाश से परे है। हम उस मालिके कुल के अंश हैं। वह हमारी चेतनता है, हमारी जागृति है।

सुमति बसे मन कुमति बिनासे, प्रेम प्यार उर आवे।

सुमति आए और कुमति जाए। अच्छे ख्याल आएँ और बुरे ख्याल चले जाएँ। मेरे सद्गुरू परमदयाल जी महाराज कहा करते थे कि पहले बुराईयाँ छोड़ो। पहले अपना निरीक्षण करो और बुरी आदतें छोड़ो। अगर हमारी खुराक तामसिक है तो हम भी वैसे ही होंगे। परसों भीलवाड़ा से फोन आया। वह कहता है कि महाराज जी, मैंने बहुत समय पहले का नामदान लिया हुआ है। मैंने कहा यह तो बड़ी खुशी का बात है। वह कहने लगा जब मैं नाम जपता हूँ तो बाएँ तरफ से बहुत गूँज आती है। मैंने उसको कहा कि कल एक सज्जन कह रहे थे कि मुझे दायीं तरफ से आवाज़ आती है। जिसको दायीं तरफ से आवाज़ आती है वह कहता है यही अनाहद है। जिसको बायीं तरफ से आवाज़ आती है वह कहता है यही अनाहद है क्योंकि उनको किसी ने बताया ही नहीं कि वह क्या चीज़ है? यह चीज़ न दाएँ है न बाएँ है। बायीं तरफ की आवाज़ तामसिक है। मैंने कहा तुम प्याज खाते होंगे, लहसून खाते होंगे, तली हुई चीजें खाते होंगे, मसालेदार खाना खाते होंगे। मैंने पूछा खाते हो न भई।

कहने लगा हाँ बाबा जी। मैंने कहा फिर तो तुम्हें बायीं ओर ही आवाज़ सुनाई देगी। तुम्हारी खुराक ही तामसिक है तुम्हें इधर की आवाज़ ही सुनाई देगी दूसरी आ ही नहीं सकती। जिसको अन्दर से आवाज़ आयेगी वह दुनिया चाहता है कि मेरे बच्चे अच्छे हों, मेरा मकान अच्छा हो, बच्चे काबिल हों, वह रजोगुनी होता है। जो तमोगुणी होता है वह जो मिल गया खा लिया। दस बजे तक सोया हुआ है। हर रात के पिछले हिस्से में दौलत लुटती रहती है **जो जागत**

हैं सो पावत हैं, जो सोवत हैं वह खोवत हैं। जो सुबह-सुबह नहीं उठते हैं उनको वह दौलत नहीं मिल सकती। रात को दो बजे सोते हैं और सुबह दस बजे उठते हैं, उनको कुछ नहीं मिल सकता। इसलिए जो असली धुन है वह न दाएँ की है, न बाएँ की है वह ऊपर से है (सुषुम्ना नाड़ी से होते हुए) वह केन्द्र से आयेगी। जब तुम अभ्यास करते हो तो केन्द्र से भी कई आवाज़ें आती हैं। किसी को घण्टा सुनाई देगा, किसी को बाँसुरी सुनाई देगी, किसी को रारंग सुनाई देगा, किसी को ओम् की आवाज़ सुनाई देगी। यह हर इंसान की अपनी-अपनी प्रकृति है लेकिन यह सारी की सारी मन की नादेत है इसका उस अनहद से कोई सम्पर्क नहीं है, वह तो ऊपर है–

गुरूबाणी में कहा गया है–

अनहद सुनो बट भागयो, सकल मनोरथ पूरे।
पार ब्रह्म सब पाया, उतरे सगल वसूरे॥

वह पारब्रह्म क्या है? पारब्रह्म है प्रकाश। जब तक प्रकाश नहीं देखोगे तब तक अनहद भी सुनाई नहीं देगा। इसीलिए कहते हैं कि सत्संग मिले और मेरा उन वचनों पर विश्वास हो जाए। मेरा कोई प्रश्न न रहे। प्रश्न अपने-आप से करें कि ऐसा बताया देखूँ कि क्या ऐसा है This is Science है यह झुठलाई नहीं जा सकती। सभी सन्तों ने यह बात बतलाई है। लेकिन दुनिया इस पर चलती नहीं, दुनिया कहती है कि इसकी जरूरत नहीं है। जो लिखा धुर आया वह मिट नहीं सकता। इसीलिए सन्तों ने कहा कर्म, जो-जो करेगा, अन्त में भोगना पड़ना। ऐ इन्सान! तूने जो कुछ भी करना है कर तेरा ही कर्म तेरा Bank Balance है। तुम्हें तुम्हारा ही किया हुआ कर्म मिलेगा। तेरे ही ख्याल का बोया बीज तुम्हें काटना पड़ेगा, अच्छा बोलोगे तो अच्छा जीवन बन जायेगा, बुरा बोलोगे तो बुरा जीवन बन जायेगा। इसीलिए कहा

कि ऐ इन्सान! तू दोनों से ऊपर उठ जा। नेकी और बदी से ऊपर उठ जा।

सुमति बसे मन कुमति बिनासे, प्रेम प्यार उर आवे।

जब सुमति आ जाएगी, बुरी मत चली जायेगी तब प्रेम पैदा होगा। जहाँ ईर्ष्या है, द्वेष है, नफरत है, शत्रुता है वहाँ प्रेम कैसे आयेगा? वहाँ प्रेम आ ही नहीं सकता। जिसके मन में ईर्ष्या है, द्वेष है, शत्रुता है, नफरत है वह व्यक्ति प्रेम नहीं कर सकता। वह धोखा कर सकता है। जिसके मन में सुमति आ गई, अच्छे विचार आ गए, नेक विचार आ गए, गुरू का मत आ गया, उनके अन्दर प्रेम भी आ जायेगा और यह सारी बुराईयाँ, द्वेष, नफरत चली जायेंगी। गुरू जी तो यह भी कह गए– **जिन प्रेम कियो तिन ही प्रभु पाइयो।** ऐ इन्सान! जब भी प्रेम होगा तेरी अपनी जात से होगा। दूसरे से हो नहीं सकता। तुम अपनी जात से प्रेम करना सीखो। जिस दिन तुमने अपनी जात, अपने आपसे प्रेम करना सीख लिया, तुम्हारा दुनिया से अपने आप ही प्रेम होता जायेगा, फिर तुम्हें सबमें वही दिखाई देगा। इसलिए इस कुमति को जाने दो। 'ऐ गुरू दया कर मेरी कुमति चली जाये, मुझे सुमति मिल जाये और तेरी वाणी का मुझे पूरा विश्वास हो जाये। तेरी वाणी पर मुझे चलने की ताकत मिले।'

ज्ञान ध्यान से नेह लगाऊँ, दुख दारून न सतावे।

वे कहते हैं कि ज्ञान-ध्यान से नेह लगाओ। ध्यान किसका लगाना है? ध्यान में बहुत बड़ी ताकत है। बृहंगीं का कीड़ा रेत में बैठा हुआ बृहंगीं की आवाज़ सुनकर खुद बृहंगीं बन जाता है। इसीलिए ध्यान में बहुत बड़ी ताकत है। हमने ध्यान कहाँ लगाना है? हमने ध्यान गुरू की मूर्ति पर लगाना है, क्योंकि वह मूर्ति ज्ञान का भंडार है। वह गुरू की मूर्ति शरीर नहीं है, वह ज्ञान का भंडार है।

सन्तमत का दुर्भाग्य है कि हर जगह गुरू बन गए। पता नहीं कितने ही गुरू इस हिन्दुस्तान में हैं। एक गुरू की चर्चा करने वाले हज़ार मिल जाएँगे कि यही गुरू है और कोई दूसरा गुरू है ही नहीं। जो गुरू को देह मानता है वह आदमी मेरा गुरू है। वह जम का फेर है। वह बच नहीं सकता। गुरू और है और सद्गुरू और है। जो इन्सान चोले में आया है, आप जैसा है वह उस सद्गुरू का भेद देता है। वह सद्गुरू तुम्हारे अन्दर है। बाहरी शरीरधारी उस ज्ञानी पुरूष की इतनी कृपा हो गई कि उन्होंने अपना सारा भेद दिया, क्या भेद दिया? सद्गुरू तुम्हारे अन्दर है। सन्तमत में दो चीज़ें बहुत Important हैं। तुम दुनिया चाहते हो, सबको दुनिया चाहिए। मेरी भी दुनिया बनाई। वह एक मालिक है, लेकिन दुनिया उसको नहीं मानती।

उस मालिक का कोई एक नाम रख लो, कोई झगड़ा नहीं। उसको तुम वाहेगुरू कह लो, उसको तुम राम कह लो। अगर तुम समझते हो कि राम अयोध्या में पैदा हुआ तो तुम सुखी नहीं रह सकते। अगर तुमने कृष्ण को गोपियों में खेलने वाला माना तो तुम्हारा जीवन सफल नहीं हो सकता। उसको परमतत्त्व मानो कि वह है और उसका एक नाम रख लो। उसका नाम सिमरन किया करो और उसका ध्यान किया करो तुम्हारी दुनिया बन जायेगी। अगर वह तुम्हारे अन्दर प्रकट हो गया और तुमने कहा कि उन्हें उसके दर्शन हो गए तो तुम धोखे में हो क्योंकि वह तो आया नहीं तुम्हारा अपना मन है। अगर वह आता होता तो मेरे में भी आता, वह सबमें आता। वह तुम्हारा अपना बनाया हुआ है। मेरा इष्ट मेरे अन्दर आयेगा और तुम्हारा इष्ट तुम्हारे अन्दर आयेगा। इसलिए तुम्हारा अपना बनाया हुआ है मेरा अपना बनाया हुआ है। मन ही तो है। जब वह रूप नज़र आयेगा तो उसको समझो कि वह प्रकाश और शब्द की मूरत है। यही ज्ञान-ध्यान है। मगर अफसोस यह है कि तुम बाहर भागते हो। **मन का हुज़रा साफ कर,**

जाना के आने के लिए, ध्यान गैरों का हटा उसको बैठाने के लिए। लेकिन हम छोड़ते नहीं हैं क्योंकि सत्संग नहीं मिला इसलिए सत्संग की बहुत बड़ी महिमा है।

मन कर्म वचन रहूँ नित सेवक। सदा तुम्हारा ध्यान। हमारी ज़िन्दगी के तीन स्तम्भ है जिन पर हमारा जीवन खड़ा है। वह हैं– मन, कर्म और वचन। सभी शास्त्र, वेद, महापुरुषों की वाणी कहती है कि ऐ इन्सान! तू मन, कर्म और वचन से शुद्ध रह। बस बात बन गई। जिसने मन में शुद्धि ले ली, मन में बुरा विचार नहीं किया, मन में ईर्ष्या नहीं की, द्वेष नहीं किया, सबके प्रति प्रेम करना शुरू कर दिया वह तो सोना बन गया।

मगर हम सबसे ज्यादा जुर्म अपने मन के साथ करते हैं, बोलते नहीं, कुढ़ते हैं मन में बुरे विचार उठाते हैं हम। सास–बहू के खिलाफ और बहू सास के खिलाफ, भाई–भाई के खिलाफ, गुरू गुरू के खिलाफ। इससे सारा ब्रह्माण्ड जल रहा है। ब्रह्माण्ड को आग लगी है, हमारे बुरे ख्यालों से। अगर तुम खाना कुढ़ते हुए (गुस्से से) बनाओगे तो तुम सबसे ज्यादा जहर खिला रहे हो, तुम्हारे बच्चे तन्दुरुस्त नहीं रह सकते। जब मैं कॉलिज में प्रोफैसर था। हम तीन प्रोफैसर कॉलिज से निकले। पहले एक प्रोफेसर का घर था, थोड़ी दूरी पर दूसरे का और उससे थोड़ी दूरी पर तीसरे का। पहले मेरा घर आया मैंने कहा आओ पहले चाय पीते हैं, मेरी पत्नी तब वहाँ नहीं थी। दूसरे प्रोफेसर बोले नहीं मेरे घर चलते हैं वहाँ कॉफी पीते हैं। हम उनके घर चले गए– उनकी पत्नी जो कि किसी स्कूल में पढ़ाती थी तो उनकी सहेली भी आई हुई थी।

जब हम वहाँ पहुँचे तो वे दोनों बाजार जाने के लिए तैयार हो रही थीं। वे अन्दर जाकर अपनी पत्नी से बोले कि कमल जी और गुप्ता जी

आए हैं। तीन कप काफी बना लाओ। उसको गुस्सा आ गया कि हम तो बाजार जा रही थीं और आप लोग मुँह उठा कर आ गए हो। आप खुद ही बना लो मुझसे नहीं बनती। मुझे उनके शब्द सुनाई दे रहे थे। जब पत्नी कमाती हो तो पति को विनम्रता दिखानी पड़ती है। वे बोले चल दो मिनट लगने हैं, बना दे मैं पानी रख देता हूँ। हमारे सामने तीन कप काफी के आ गए। मैं तो इस गुस्से की फिलोस्फी को जानता था। मैंने सोचा कि यह काफी नहीं पीनी है। मैंने कहा मैं होम्योपैथिक दवाई खाता हूँ और इस दवाई के साथ काफी नहीं पीते। तू मुझको सिर्फ पानी पिला दे। उन दोनों ने काफी पी ली, मैंने पानी पी लिया, वे अपने घर गए और मैं अपने घर आ गया।

अगले दिन सुबह सात बजे गुप्ता जी मेरे घर पहुँच गए। गुप्ता जी बोले, कमल जी पहले यह बताओ कि आपने कल काफी क्यों नहीं पी? मैंने पूछा क्यों, क्या हुआ? मैंने जब से काफी पी मुझे Loose-Motion लगे हुए हैं। मैंने कहा गुप्ता जी मुझे पता था यह होना ही है, इसलिए ही मैंने काफी नहीं पी। ऐ इन्सान! तेरा ख्याल इतना जबरदस्त है कि वह वह खाने को अमृत भी बना सकता है और खाने को जहर भी बना सकता है। तेरी दृष्टि बच्चे को काबिल भी बना सकती है और बच्चे को नाकाबिल भी बना सकती है। जो माँ अपने बच्चे को प्रेम से देखती है, उसको अच्छे ख्याल देती है वह बच्चा काबिल बनेगा और जो माँ बच्चे को कहे तू मर जाये जाकर, तू निकम्मा है, वह बच्चा कभी काबिल नहीं होता। पहले मन को देखो, मन से शुद्ध रहो, मन से कभी बुरा मत सोचो। मन ने दुनिया मार दी। बुरा वचन कटारी का काम करता है। मीठी बाणी बोलने से तुम्हारा मन भी ठीक रहेगा, तुम्हारा शरीर भी ठीक रहेगा। इसलिए मन, वचन से शुद्ध रहने की कोशिश करो। ऐ–इन्सान ऐसे शब्द किसी से न कह

जिससे किसी का मन दुखी हो। किसी ने कहा है– **मन्दिर को गिरा मस्ज़िद को गिरा, पर किसी के दिल को मत दुखा क्योंकि वह भगवान का घर है।**

कर्म करो पर उस कर्म से किसी का नुकसान न हो। पुरूषार्थ करो पर उस पुरूषार्थ से दूसरे का भी भला हो और तुम्हारा भी भला हो। ऐसा नहीं कि उसका नुक्सान हो जाए और मेरी जेब भर जाये। ऐसा काम करो जिसमें दूसरों का भी सुख हो और तुम्हें भी सुख मिले। मेरा भी स्वार्थ न हो और दूसरों का भी स्वार्थ खराब न हो। वह कर्म करो जिससे सबका भला हो। इससे तुम्हारी ज़िन्दगी खिल जायेगी। तुम्हारे दुख दूर हो जाएँगे। हम अपने मन से ही अपने दुखों का बीज बोते हैं, हम अपने कर्म से ही और वचन से ही दुखों के बीज बोतें हैं। इसलिए सन्तों ने कहा– **कर्म जो-जो करेगा भोगना अन्त में पड़ेगा।**

सुमिरन भजन में समय बिताऊँ, यही मूल है ज्ञाना॥

दाता दयाल जी ने नौजवानों को अलग शिक्षा दी और औरतों को अलग शिक्षा दी है, जैसा मैंने पहले भी बताया कि रोटी प्रेम से बनाओ, बच्चों को अच्छी शिक्षा और अच्छे ख्याल दो। नौजवानों के लिए पढ़ो और तरक्की करो। जिस माँ ने बच्चा पैदा ही नहीं किया उसको क्या पता कि बच्चा पैदा करते समय क्या तकलीफ होती है। ऐसे ही जिसने गृहस्थ नहीं भोगा उसे दुनिया का अनुभव नहीं हो सकता। सन्तमत है ही दूसरों के लिए। जिन्होंने दुनिया देख ली, अनुभव कर लिया। पत्नी का सुख, बच्चों का सुख, पोते-पोतियों का सुख, संसार का सुख, नौकरी, सब कुछ देख लिया, उनको क्या करना है? सुमिरन, ध्यान और भजन। नौजवानों के लिए केवल सुमिरन और ध्यान है, जो चाहते हो वह तुम्हें मिलेगा अगर तुम्हारा ख्याल गन्दा है तो बुरा कर्म ही करोगे। सुमिरन, ध्यान करने के लिए पहले

नेक बनो। अच्छे ख्याल रखो। जिससे किसी का बुरा न कर सको। Simple रहो और अच्छे ख्याल रखो। सुमिरन, ध्यान और भजन क्यों करो? क्योंकि पता लग जाये कि मैं कौन हूँ? सुमिरन, ध्यान इसलिए नहीं करना कि मैं सन्त बन जाऊँ। आजाद होने के लिए करो, अपनी वासनाओं से आज़ाद होने के लिए सुमिरन, ध्यान करो।

सुमिरन भजन में समय बिताऊँ, यही मूल है ज्ञाना॥

हमारा मूल काम जो 75-80 साल के हो गए हैं वे सुबह, शाम भजन और ध्यान करें। मन के परे क्या है? उसकी खोज करना–

राधास्वामी सदा मनाऊँ, राधास्वामी गाऊँ।
राधास्वामी नाम जपूँ और राधास्वामी ध्याऊँ॥

दातादयाल जी अब कह रहे हैं कि जितने काम कर रहा हूँ कि कुमति चली जाये, सुमति आ जाये, दुख दूर हो जाये, मन, वचन से मैं ठीक हो जाऊँ, सुमिरन करूँ, ध्यान करूँ और अन्त में कहा कि राधास्वामी गाऊँ, राधास्वामी सुनाऊँ, राधास्वामी जपूँ, राधास्वामी जपाऊँ। अब एक सवाल पैदा होता है कि क्या राधास्वामी नाम जपने से हम वहाँ पहुँचेंगे। परमदयाल जी की शिक्षा है जो उन्होंने कहा उस पर तो मोहर लगी हुई है। जैसा कि दातादयाल जी ने कहा राधास्वामी जपूँ, राधास्वामी गाऊँ, क्या यह जरूरी है कि सभी राधास्वामी नाम का जाप करें? यह जो नाम है वह वचन से बोला जाता है। ये नाम इसलिए रखे गए हैं ताकि हमारा मन ठहर जाये। चाहे तुम वाहेगुरू का नाम जपकर मन को ठहरा लो। तुम राम-राम का नाम जपकर मन को ठहरा लो, तुम अल्लाह-अल्लाह कह कर मन को ठहरा लो। जिस नाम से तुम्हारा मन ठहरता है, उस नाम को तुम जप लो। अशान्ति तब है जब मन का ठहराव नहीं है। नाम केवल मन को टिकाने के लिए है। यह नाम मन को टिकाकर उस नाम की तरफ चलने का साधन है।

दातादयाल जी ने इसीलिए इस नाम की महिमा गाई क्योंकि उनको यही नाम मिला, मेरे सद्गुरू परमदयाल जी को भी यही नाम मिला और मुझे भी यही नाम मिला। इसलिए मैं इसी नाम के गुण गाता हूँ। यह राधास्वामी कोई पुरुष नहीं है, यह राधा कोई स्त्री नहीं है। स्वामी कोई आदमी नहीं है। राधा मेरी सुरत है जो ऊपर से धारा के रूप में आती है। इसको बुद्धि, चित्त, अहंकार, मन आदि मिल गए फिर चार कर्मोन्द्रियाँ मिल गईं, चार ज्ञानेन्द्रियाँ मिल गई फिर इन चौदह में खेल रही है। अब इसको उल्टा करना है राधा की धारा बनाना है और धारा को राधा बनाना है, जब राधा उल्टी होगी तो वहीं अपने स्वामी के पास जायेगी।

राधा आद सुरत का नाम, स्वामी आद शब्द पहचान॥

यह राधा-स्वामी है। इसको तुम और नाम से कह लो। लेकिन इसका जन्म लिए हुए पुरूष से कोई सम्बन्ध नहीं है। यह अजन्मा है, सदा है, कायम है वह शब्द है। इसीलिए इसका नाम राधास्वामी रखा गया यही नाम निजनाम है।

राधास्वामी गाए कर, जन्म सफल कर ले।
यही नाम निज नाम है, चित्त अपने धर ले॥
राधास्वामी नाम जो गाए, सोई तरे।
सुख पावे दुख हरे॥

क्योंकि यह बाहर का नाम नहीं है। आप इतनी दूर-दूर से आएँ हैं, अगर आएँ हैं तो कुछ ले जाओ। क्या ले जाओ? ख्याल ले जाओ। मन के ख्याल को बदल दो। सन्तमत में ख्याल ही बदला जाता है। अगर ख्यालब दलग यात ोि ज़िन्दगीब दलग ई ।ख यालन हींब दलात ो ज़िन्दगी नहीं बदलेगी। तुम अपने-आपको किसी रूप के साथ लगा लो तुम्हारा कल्याण हो जाएगा।

घरों में शान्ति रखा करो, घरों में प्रेम लाओ। बच्चों को अच्छी शिक्षा दो। छोटी-छोटी बातों पर झगड़े मत किया करो। यह मेला है इसमें खुशी से रहो। एक-दूसरे के काम आओ। तुम किसी की मदद करोगे तो तुम्हारी भी मदद होगी। तुम किसी का सहारा बनोगे तो तुम्हें भी सहारा मिलेगा। जिस घर में शान्ति है, प्रेम है, वहाँ कोई कमी नहीं रहती। जिस घर में कलह-क्लेश है फिर चाहे कहीं भी चले जाओ, तुम्हारा कल्याण नहीं होगा। ऐ मालिक दया कर कि हम सबके विचार एक जैसे हो जाएँ, हम इकट्ठे बैठकर तेरा नाम जपें, इकट्ठे बैठकर खाना खायें। जिस घर में यह सब बातें होंगी वहाँ कोई दु:ख नहीं आयेगा। आप सबका भला हो। मैं सच्चे दिल से चाहता हूँ, आप मेरे सद्गुरू के दरबार में आएँ हैं। जिस ख्याल को भी आप लेकर आते हैं, मालिक आपकी मनोकामना पूरी करे।

सबको राधास्वामी।

गुरू पूर्णिमा महोत्सव

हजूर दयाल कमल जी महाराज की अध्यक्षता में प्रतिवर्ष की भाँति इस वर्ष भी मानवता मन्दिर, होशियारपुर में **गुरू पूर्णिमा महोत्सव दिनाँक 31 जुलाई, 2015 दिन शुक्रवार** को हर्षोल्लास से मनाया जा रहा है। इस महोत्सव में देश के कोने-कोने से मानवता धर्म के अनुयायी पधार रहे हैं, जो अपने अनुभवों से उपस्थित जनसमूह को कृतार्थ करेंगे।

सभी सत्संगी इस महोत्सव पर सादर आमंत्रित हैं।

(M) : 094631–15977 **– जनरल सैक्रेटरी**

आभार प्रदर्शन

निम्नलिखित सज्जनों ने मानवता मन्दिर होशियारपुर में सहयोग राशि भेजी है। परमपूज्य परमदयाल जी की परमकृपा इन सज्जनों और इनके परिवारों पर सदैव बनी रहे। ट्रस्ट इनके प्रति अपना आभार प्रकट करता है। – सचिव

S. NO.	DONOR	AMOUNT
1.	Guridial Singh	15000/–
2.	Janeshwar Goyal (Nabha)	10000/–
3.	Sheila Rani/ Daman Kumar (Alawalpur)	10000/–
4.	Arvind Cloth Store (Ballia Kalan)	6500/–
5.	Seema D/o Abhay Kumar Dogra (Hoshiarpur)	5226/–
6.	Naresh Kwatra (Billari)	5100/–
7.	Deepti Konda (Faridabad)	5100/–
8.	Seema Rani (Budhawar)	5000/–
9.	Gopal (Moradabad)	5000/–
10.	Praveen Singh Thakur	5000/–
11.	Ajit Singh (Bassi Jalal, Hoshiarpur)	5000/–
12.	Bhupinder Singh Tiranga (New Delhi)	5000/–
13.	Manohar Pandit (Mumbai)	5000/–
14.	Mr. Mukul/ Mr. Sudha Bhatnagar (U.S.A.)	3209/–
15.	Kirpal Dogra (Chandigarh)	3100/–
16.	Ashish Sood (Pragpur)	3000/–
17.	Sanjay Kumar (Pathvar)	3000/–
18.	Ex-Hav. Krishan Gopal (Shahadra)	2600/–
19.	M/s. M. J. Kothari Pvt. Ltd. (Mumbai)	2501/–
20.	Harvinder Singh (Ludhiana)	2100/–
21.	Dr. D. K. Tiwari (Hoshiarpur)	2100/–
22.	Gaurav– Billari (U. S. A.)	2100/–
23.	Ranvir Singh Pathania (Nagrota)	2100/–
24.	Virender Kumar/ Kiran Sharma (Ludhiana)	2000/–
25.	Ishwar (Pathiar)	1400/–
26.	N/ Sub. Jagdeep Singh C/o 56 APO	1300/–
27.	Swadesh Walia (Hoshiarpur)	1200/–
28.	Inderjit Singh (Jaito Sarja)	1100/–
29.	Anil Chaudhary (Moradabad)	1100/–
30.	Deepak Malhotra (Delhi)	1100/–
31.	Babu Ram Thakur (Nimhol)	1000/–
32.	Dr. D. N. Tiwari (Rai Bareilly)	1000/–
33.	Mohar Singh (New Delhi)	1000/–
34.	Anup Mohan (Moradabad)	1000/–
35.	Ashok Khetrapal (Panchkula)	1000/–
36.	Ashwani Sagar (U. S. A.)	1000/–
37.	Jagwanti Devi (Khaniara)	600/–
38.	J. K. Trading Corp. (Mumbai)	531/–
39.	Mukesh Kumar (Kangra)	501/–
40.	Vandana (Nagrota Bagwan)	501/–
41.	Prem Kohli (Moga)	500/–
42.	R. S. Pathania (Nagrota)	500/–
43.	Geeta Ram (Plog (H. P.)	500/–
44.	Ram Chand Bhandari (Jalandhar)	500/–
45.	Shri Chand (Nagrota)	500/–
46.	Dev Raj sharma (Bawari)	500/–
47.	Sat Swarup Dogra	500/–
48.	Ramesh Chander Kaushal (Panchkula)	500/–
49.	Chheda Lal Gupta	500/–
50.	B. S. Sharma (Jwalamukhi)	500/–
51.	Kailashpati (Hyderabad)	500/–
52.	In Memory of Sh. Ram Saran (Lambra)	500/–
53.	D. Anil Kumar (Hyderabad)	500/–
54.	Tarun K. Sharma (Delhi)	2100/–
55.	Gautam Kumar Sharma (Delhi)	1100/–